नवम्बर-२०२० ◆ वर्ष ९ ◆ अंक ०७ ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

मासिक

नवम्बर-२०२०

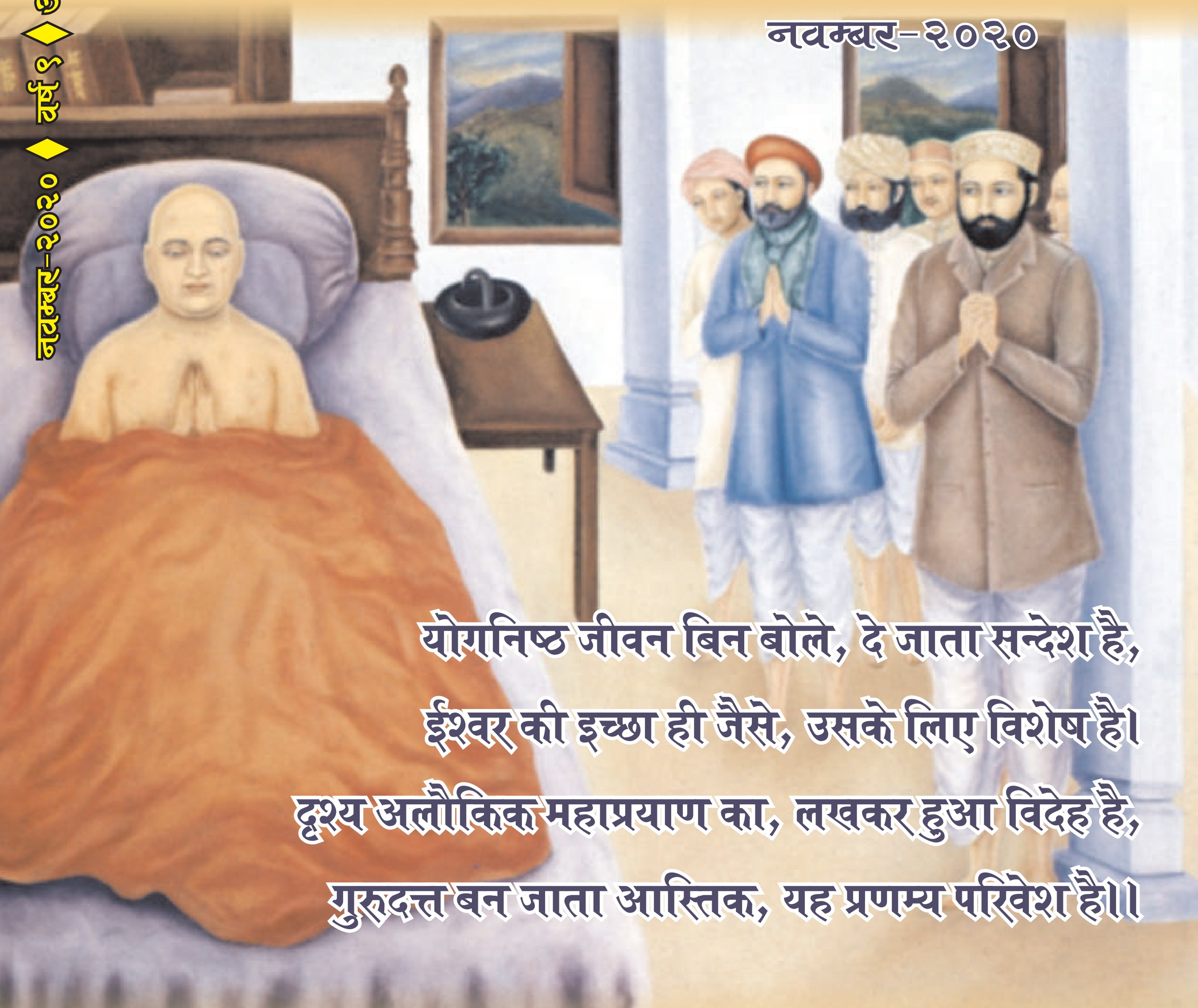

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर-313001 (राज.)

₹ १० १०६

आपका प्यार, आपका विश्वास
एमडीएच ने रचा इतिहास
1919·CELEBRATING·2019
1919·शताब्दी उत्सव·2019
100
Years of affinity till infinity
आत्मीयता अनन्त तक
MDH
मसालों में 100 साल की शुद्धता के जश्न
पर सभी ग्राहकों, वितरकों एवं शुभचिन्तकों को हार्दिक बधाई
महाशय धर्मपाल जी
पद्मभूषण से सम्मानित
विश्व प्रसिद्ध एमडीएच मसाले शुद्धता और गुणवत्ता की कसौटी पर खरे
भारत सरकार द्वारा "ITID Quality Excellence Award" से सम्मानित किया गया।
यूरोप में मसालों की शुद्धता के लिए "Arch of Europe" प्रदान किया गया।
"Reader Digest Most Trusted Brand Platinum Award" भी प्रदान किया गया।
The Brand Trust Report ने वर्ष 2013 से 2019 तक लगातार
5 वर्षों के लिए ब्रांड एमडीएच को India's Most Trusted Masala Brand
& India's Most Attractive Brand का स्थान दिया है।
MDH मसाले
सेहत के रखवाले
असली मसाले सच–सच
KASHMIRI MIRCH
Rajmah masala
Sabzi masala
Pav Bhaji masala
Garam masala
DEGGI MIRCH
Chunky Chat masala
Kitchen King
Chana masala
Sambhar masala
Shahi Paneer
Jal Jeera masala
महाशय जी ने बड़े पैमाने पर समाज और मानव जाति की सेवा के लिये व्यवसाय को समर्पित किया है। एक सर्वश्रेष्ठ उद्योगपति होने के साथ साथ वह न केवल एक परोपकारी व्यक्ति हैं बल्कि समाज के कमजोर वर्ग के लिये ताकत और समर्थन का एक स्तम्भ भी हैं। एमडीएच एक कंपनी ही नहीं वह एक संस्था है एक विशाल परिवार है जोकि अपने सहयोग से 70 से अधिक सामाजिक संस्थाएं जैसे स्कूल, अस्पताल, गौशालाएँ, वृद्धाश्रम, अनाथालय, गरीब छात्रों, विधवाओं एवं गरीब परिवारों एवं आर्य समाज इत्यादि कई सामाजिक संगठनों की आर्थिक रूप से महाशय धर्मपाल चैरिटेबल ट्रस्ट और महाशय चुन्नीलाल चैरिटेबल ट्रस्ट के माध्यम से मदद करते हैं।
ESTD. 1919
महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लिमिटेड
9/44, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन नं० 011-41425106-07-08
E-mails : mdhcare@mdhspices.in, delhi@mdhspices.in www.mdhspices.com

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

प्रमुख संरक्षक – सत्यार्थ सौरभ

महाशय धर्मपाल जी (एम.डी.एच.)
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल

डॉ. महावीर मीमांसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक

अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक

भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग

नवनीत आर्य (मो.9314535379)

व्यवस्थापक

सुरेश पाटोदी (मो.9829063110)

सहयोग ◆	भारत	विदेश
संरक्षक	- 11000 रु.	$ 1000
आजीवन	- 1000 रु.	$ 250
पंचवर्षीय	- 400 रु.	$ 100
वार्षिक	- 100 रु.	$ 25
एक प्रति	- 10 रु.	$ 5

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया मेन ब्रांच टाऊन हॉल, उदयपुर खाता संख्या : 310102010041518 IFSC CODE- UBIN 0531014 MICR CODE- 313026001 में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत् १९६०८५३१२१
कार्तिक कृष्णा षष्ठी
विक्रम संवत् २०७७
दयानन्दाब्द १९६

November - 2020

०४ वेद सुधा
०६ मेरे पापा
१५ हिन्दी को भी चाहिए....
१७ न्यायार्थ अपने जीवनसाथी...
१९ Maharshi Dayanand's Contribution
२३ पंडिता रमाबाई : एक मूल्यांकन
२५ स्वास्थ्य- पथ्य अपथ्य पर विचार
२६ अविचल रहे तिरंगा प्यारा
३० ईश्वर भक्ति क्यों?

समाचार २८
हलचल २९

सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)
कवर 2 व 3 (भीतरी आवरण) रंगीन 3500 रु.
अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)

पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	2000 रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	1000 रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम)	750 रु.

स्वामी — श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - ९ । अंक - ०७

मुद्रण — द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

प्रकाशक

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर (राजस्थान) 313001
(0294) 2417694, 09314535379, 07976271159
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर–313001 से प्रकाशित, सम्पादक–अशोक कुमार आर्य

ओ३म्

वेद सुधा

विद्या का नाश नहीं होता

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति।
देवांश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह।। - अथर्व. ४/२१/३

ताः न नशन्ति- वे नष्ट नहीं होतीं, **देवान् यजते**- देवयज्ञ करता है, विद्वानों का, **तस्करः न दभाति**- चोर नहीं दबाता है। सत्कार और सत्संगति करता है। **व्यथिः अतित्रः**- दुःखदायी शत्रु (भी), **स ददाति**- और दान करता है। **आसाम न +दधर्षति**- इनका तिरस्कार, **गोपतिः**- इन्द्रिय- स्वामी जीवात्मा नहीं कर सकता। **ज्योग्**= निरन्तर, **याभिः**= जिनके द्वारा, **ताभिः सह**- उनके साथ, **सचते**= सम्बद्ध रहता है।

व्याख्या

इस मन्त्र में विद्या के गुणों का वर्णन और विवेचन है।

मनुष्य जो कुछ देखता-सुनता है, उस सबका संस्कार उसके आत्मा पर पड़ता है। साधारण रीति से यही भासता है कि जो कुछ हम देख-सुन रहे हैं वह क्रिया उतने ही समय के लिए है, जितने समय तक वह देखने सुनने का कर्म चल रहा है, क्योंकि ऐसा भी होता है कि हमने किसी स्थान विशेष में कोई वस्तु देखी, देखकर हम चले आये। फिर उसका कोई विचार नहीं उठता, किन्तु कभी-कभी सहसा अथवा किसी कारण से उसकी स्मृति जाग खड़ी होती है। यह कैसे होता है? देखने की क्रिया तो कभी की नष्ट हो चुकी। अब फिर उसके सम्बन्ध में यह स्मृति कैसे उत्पन्न हुई? मानना पड़ता है कि जो कुछ हम देखते-सुनते हैं, उस सबका एक संस्कार आत्मा पर पड़ता है, जो अनुकूल साधन पाकर स्मृति के रूप में जाग खड़ा होता है। भाव यह निकला कि हमारी सारी क्रियाओं=चेष्टाओं की आत्मा पर एक अमिट सी छाप पड़ती है, जिसका मिटाना सरल नहीं है।

विद्या=ग्रहण करना भी एक क्रिया है, चेष्टा है। उसकी भी आत्मा पर छाप पड़ती है, संस्कार पड़ता है और वह संस्कार अमिट सा है। इसलिए वेद ने कहा-

'न ताः नशन्ति।' वे विद्या की छापें नष्ट नहीं होतीं।

संसार का धन, प्राकृतिक-सम्पत्ति, भौतिक ऋद्धि काल पाकर नष्ट हो जाती हैं। जहां संयोग है, वहां वियोग अवश्यंभावी है। धन-सम्पत्ति आज एक के पास है। कल वह चला, चंचला उसे छोड़कर दूसरे के पास चली जाती है। वेद ने बहुत सुन्दर शब्दों में कहा भी है-

ओ हि वर्तन्ते रथ्येव चक्रान्यमन्यमुप तिष्ठन्त रायः। - ऋग्वेद १०/११७/५

धन तो रथ के पहियों की भांति लोट-पोट होते रहते हैं और दूसरों-दूसरों के पास जाते रहते हैं।

आज एक धनी है कल वही निर्धन है। धन सांयौगिक पदार्थ है, सांयौगिक का वियोग होकर ही रहता है, किन्तु विद्या का नाश कैसे हो, वह आत्मा का गुण है। धन सांयौगिक है, चोर उसे चुरा सकता है, किन्तु विद्या को-

'न दभाति' तस्कर- चोर नहीं दबा सकता, डाकू नहीं छीन सकता। मानो इस मन्त्र के इस चरण का अनुवाद ही किसी कवि ने किया है-

हर्तुर्न गोचरं याति दत्ता भवति विस्तृता।
कल्पान्तेऽपि न या नश्येत् किमन्यद्विद्यया समम्।।

चोर की दृष्टि में आती नहीं और देने से बढ़ती है, सृष्टि-नाश होने पर नष्ट होती। विद्या के तुल्य ऐसी और कौन वस्तु हो सकती है? किसी विरोधी शत्रु का क्या सामर्थ्य जो विद्वान् को दबा सके या विद्या का तिरस्कार कर सके-

नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति।

कोई दुःखदायी शत्रु विद्या का नाश नहीं कर सकता। विद्या के बल से मनुष्यों में उत्तमोत्तम श्रेष्ठ गुणों का विकास होता है, विद्या के कारण महाविद्वानों, ज्ञानियों की सगंति में बैठने की योग्यता प्राप्त होती है। विद्यादान के कारण उसके पास गुणग्राही सज्जनों का सदा जमघट रहता है और वह उभयतः आदर का पात्र होता है। विद्यावान् और विद्यार्थी दोनों ही वर्ग उसका सत्कार करते हैं। विद्वानों की संगति से उसे दान देने, विद्यादान की उत्तेजना मिलती है और वह देता है। वेद कहता है-

देवांश्च याभिर्यजते ददाति च।

जिनके द्वारा विद्वानों का संग करता है और विद्यादान करता है।

किसी कवि ने मानो इसी मन्त्र-चरण का आशय ही कहा है-

संयोजयति विद्यैव नीचगापि नरं सरित्।
समुद्रमिव दुर्धर्ष नृपं भाग्यमतः परम्।।

जैसे नदी, नीचे जाने वाली नदी समुद्र-जैसे महाशय जलाशय से जा मिलती है। इसी प्रकार विद्या चाहे वह नीच पुरुष में क्यों न हो, वह उस विद्यावान् को राजा से मिला देती है और फिर भाग्य से।

कहीं किसी को भ्रम न हो जाये कि जैसे धन-सम्पत्ति दान देने से घट जाती है, जैसे किसी के पास एक करोड़ रुपये हैं, वह यदि पचास लाख किसी को दे दे, तो उसके पास शेष पचास लाख रह जायेंगे या किसी के पास पचास हजार बीघे भूमि है, उसमें से वह दस हजार बीघे भूमि किसी को दे डाले, तो उसके पास चालीस हजार बीघे शेष रह जायेंगे। इसी प्रकार संसार की दूसरी सम्पत्तियों की दशा है, वे देने से घटती हैं, ऐसे ही विद्या भी दान देने से, बांटने से घट जाती होगी। वेद इस भ्रम का मानो निरास करता हुआ कहता है-

ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह।

ऐसा ज्ञानपति=ज्ञानवान्- विद्या का निरन्तर दान करने वाला ज्ञानधन का धनी-निरन्तर विद्या से सम्बद्ध रहता है, अर्थात् देने से विद्या बढ़ती ही है, घटती नहीं है, अतः विद्यार्जन में पुरुषार्थी होकर विद्यादान में उससे भी अधिक उद्योग करो। वेद कहता है- **शतहस्त समाहर सहस्त्रहस्त संकिर।** - अथर्व ३/२४/८

सौ हाथों से कमा और हजार हाथों से बिखेर। यह वचन कदाचित् विद्या के सम्बन्ध में ही है।

किसी कवि ने विद्या की महिमा गाते हुए कहा है-

ज्ञातिभिर्वण्टयते नैव चौरेणापि न नीयते।
छाने नैव क्षयं याति विद्यारत्नं महाधनम्।।

विद्यारत्नरूपी महाजन को सम्बन्धी लोग बांट नहीं सकते, चोर इसे ले जा नहीं सकता, दान यह नष्ट नहीं होता।

एक दूसरे कवि ने कहा-

न चोरहार्यं न च राजहार्यं न भ्रातृभाज्यं न च भारकारि।
व्यये कृते वर्धत एवं नित्यं विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्।।

इसे चोर नहीं चुरा सकता, राजा नहीं छीन सकता, भाई नहीं बांट सकते, फिर इसका कोई भार नहीं। व्यय करने पर नित्य बढ़ती ही है, अतः विद्यारूपी धन सब धनों में प्रधान है, मुख्य है।

इसलिए विद्या की वृद्धि में सदा उद्योग करना चाहिए, क्योंकि वैदिक धर्म का विद्या के साथ अविनाभाव-सम्बन्ध है। मनु महाराज ने धर्म के दस लक्षणों में विद्या को स्थान दिया है। यथा-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

धृति= धीरज=हौंसला, कार्य में विघ्न आने पर न घबराना; **क्षमा=** सहनशीलता; **दम=** मन को वश में रखना, मन की चंचलता दूर करना; **अस्तेय=** चोरी न करना, पराये पदार्थ का अनुचित रीति से प्रयोग न करना; **शौच=** अन्दर बाहर की शुद्धता, **इन्द्रिय-निग्रह=** इन्द्रियों को वश में रखना, ब्रह्मचर्य; **धी=** बुद्धि, **विद्या=** ज्ञान; **सत्य=** जो पदार्थ जैसा है, उसे

ठीक-ठीक जानकर वैसा मानना, कहना; **अक्रोध=** क्रोध न करना, मन-वचन तथा कर्म से किसी को दुःख न देना, अर्थात् अहिंसा।

वेद का मुख्य अर्थ भी विद्या का साधन है। विद्या के बिना मनुष्यत्व रह नहीं सकता, अतः वेद और वेदानुकूल शास्त्र विद्या पर बहुत बल देते हैं।

विद्या के इस महत्व को जान, विद्या के ग्रहण और प्रचार करने में सबको यत्न करना चाहिए।

- स्वामी वेदानन्द तीर्थ
(साभार- स्वाध्याय-सन्दीप)

मेरे पापा

दुनिया के सारे पापा लाजवाब हैं,
या सिर्फ मेरे पापा ही नायाब हैं ?
औरों से तो मेरा रिश्ता नहीं,
लेकिन यकीनन मेरे पापा सा कोई फरिश्ता नहीं।
जिन्दगी तो धूप और छाँव की कहानी है,
पर पापा के संग ना कोई परेशानी है।
उनका वो प्यार से सिर पर हाथ फेहराना
और चुपके से सारे दर्द का भाग जाना,
यह प्रभु की मुझ पर कोई मेहरबानी है,
या खुद पापा प्रभु की कोई निशानी हैं ?
वो डाँटते तो हैं पर उनकी डाँट में भी प्यार है,
थोड़ी देर बैठ कर सोचूँ, तो यह उनका हथियार है।
अपनी बच्ची को अर्श पर देखना उनका ख्वाब है,
बस यही उनके सख्त होने का जवाब है।
उनके डाँटने पर फिर भी मैं खफा हो जाती हूँ,
इसलिए नहीं कि अपनी गलती नहीं मानती,
पर इसलिए, क्यूँकि रूठने मनाने का थोड़ा मजा उठाती हूँ।
एक बात मेरी समझ से परे है,
कि कैसे पापा कभी किसी काम से ना डरे हैं ?
जाने वो कैसे इतने निपुण हैं,
और उनमें न कोई एक भी अवगुण है ?
उनसा बन पाना तो एक सपना है,
पर इस बात की खुशी है,
कि ऐसा भी कोई अपना है।
उनका पास होना जरूरी नहीं,
बस साथ होना ही काफी है,
मेरी हर जीत पर उनका मुस्कुराना ही काफी है।
मुझे हमेशा आगे बढ़ने के लिए
प्रेरित करना उनकी जिम्मेदारी है,
और आगे बढ़कर कुछ हासिल करना
मेरी उनके प्रति जवाबदारी है।
जाने ये बेटी को कम समझने का
दुनिया के पास क्या तर्क है,
पापा ने तो कभी एहसास ही नहीं होने दिया
कि बेटा और बेटी में भी कोई फर्क है।
उन्हे परिभाषित कर सकूँ,
इतनी तो मैं काबिल नहीं,
लेकिन उनके लिए कुछ माँग सकूँ,
इसकी भी मनाही नहीं।
काश जो नींद उन्होंने मुझ पर वार दी,
ईश्वर उसे सुकून में बदल दे।
जो प्यार उन्होंने मुझ पर लुटा दिया,
ईश्वर उसे आशीर्वाद में बदल दे।
जो जवानी उन्होंने मुझे सींचने में लगा दी,
ईश्वर उसे उन्हें बुढ़ापे में बक्श दे,
और जो सपने उन्होंने उम्र भर देखे,
ईश्वर उन सब सपनों को पूरा कर दे।।

- By Mahima Gupta, Jaipur

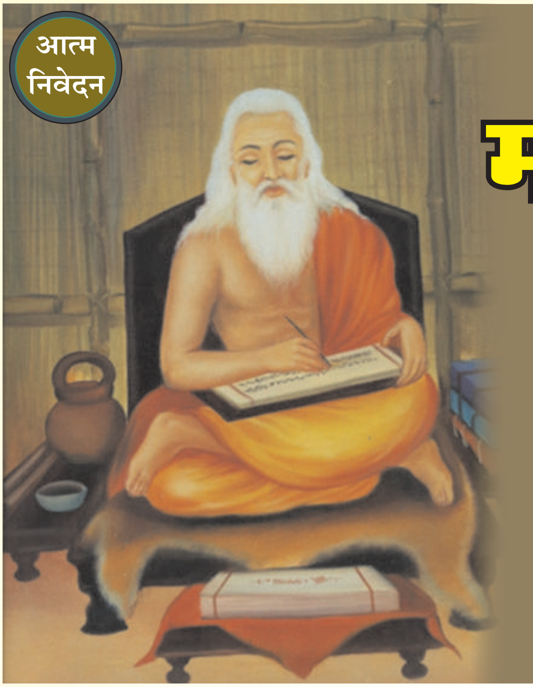

महर्षि वाल्मीकि और रामायण

मानव जीवन में जितने उदात्त गुणों की कल्पना भी की जा सकती है, जिन मर्यादाओं की खोज की जा सकती है, वे सब जिसके अन्दर समाहित हों, जिसका चरित्र सदियों तक जन-जन को मानवीय मूल्यों की प्रेरणा दे सके, यदि हम इतिहास में ऐसे महापुरुष को चिह्नित करना चाहते हैं तो केवल एक नाम हमारे समक्ष उपस्थित होता है और वह है मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम। राम मानवीय मर्यादाओं के संस्थापक हैं इसलिए मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। भारतीय समाज में मर्यादा, आदर्श, विनय, विवेक, पराक्रम, पर-दुःखकातरता, उत्सर्ग, लोकतांत्रिक मूल्यों और संयम का नाम राम है। जो व्यक्ति संयमित, मर्यादित और निःस्वार्थ भाव से परहित में रत् होकर संस्कारित जीवन जीता है, उसी में मर्यादा पुरुषोत्तम राम के आदर्शों की झलक परिलक्षित हो सकती है। राम के आदर्श लक्ष्मण रेखा की उस मर्यादा के समान हैं जिसकी सीमा सुख शान्ति की प्रतीक है, अभ्युदय के साथ निःश्रेयस की प्राप्ति कराती है और जिसका उल्लंघन विनाश की ओर ले जाता है।

वे पुरुषोत्तम हैं इसीलिए उनके गुणों का महत्त्व है। इसीलिए उनका चरित्र अनुकरणीय है। आदि कवि वाल्मीकि ने जब रामायण लिखने का निश्चय किया तो उस समय का सम्पूर्ण प्रकरण यह स्थापित कर रहा है कि प्रथम तो वहाँ तत्कालीन विद्यमान ऐसे सर्वगुण सम्पन्न व्यक्तित्व की चर्चा महर्षि वाल्मीकि और महर्षि नारद के मध्य हो रही है जो उस समय में साक्षात् इस पृथ्वी पर विराजमान है और असाधारण गुणों से सम्पन्न है। निम्न अवतरण पर विचार करेंगे तो हमारी बात स्पष्ट हो जायेगी।

श्रीमद्वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड प्रथम सर्ग द्वितीय श्लोक में ही कहा गया है, अर्थात् रामायण का प्रारम्भ यहाँ से होता है- 'तपस्वी वाल्मीकि मुनि नारद से पूछते हैं कि इस समय लोक में निश्चय से कौन व्यक्ति उत्तम गुणों से युक्त पराक्रमी, धर्म को जानने वाला, कृतज्ञ, सत्यवादी और दृढव्रती है? कौन आत्मज्ञानी, क्रोध को जीतने वाला और कान्तिमान है, कौन असूया से रहित है और किस क्रुद्ध हुए व्यक्ति से देवगण भी युद्ध में डरते हैं .... हे महर्षे! आप ऐसे मनुष्य को जानने में समर्थ हैं।

को न्वस्मिन साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्।
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रतः॥ ...(वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड प्रथम सर्ग १)

यहाँ हमें दो बातों पर विशेष ध्यान रखना है वाल्मीकि अपने प्रश्न में पूछ रहे हैं कि इस समय अर्थात् वर्त्तमान समय में, ऐसे ऐसे गुणों वाले महान् व्यक्ति कौन हैं? इससे स्पष्ट होता है कि वाल्मीकि महर्षि श्री राम के समकालीन थे। अतः जितना प्रामाणिक विवरण श्रीराम के विषय में वाल्मीकि महर्षि को ज्ञात हो सकता था उतना अन्य को नहीं। अतः वाल्मीकि रामायण ही विद्वानों में श्रीराम के जीवन के सबसे प्रथम वर्णन के रूप में मान्य है। वाल्मीकि जिस समय रामायण को लिखना प्रारम्भ करते हैं उस समय श्री राम के जीवन से सम्बंधित सभी प्रमुख घटनाएँ घट चुकीं थीं अर्थात् रावण वध के पश्चात् श्री राम अयोध्या लौट आये थे और राम राज्य की स्थापना हो चुकी थी। क्योंकि इस अवसर पर नारद मुनि जब श्री राम के बारे में उनके गुणों

का वर्णन करते हैं तो उन्होंने वहीं उनके जीवन की सभी प्रमुख घटनाओं का वर्णन किया है जो राम के राज्यारोहण के साथ ही समाप्त होता है। बालकाण्ड के चतुर्थ सर्ग का प्रथम श्लोक इसे प्रमाणित कर देता है-

प्राप्तराज्यस्य रामस्य वाल्मीकिर्भगवानृषि:।
चकार चरितं कृत्स्नं विचित्रपदमर्थवत्।।

अर्थात् भगवान वाल्मीकि ऋषि ने राज्य को प्राप्त हुए राम का विचित्र पद और अर्थ से युक्त सम्पूर्ण काव्य रचा।

दूसरी महत्वपूर्ण बात है कि वाल्मीकि नारद जी से गुणवान पुरुष के बारे में पूछते हैं-

महर्षे त्वं समर्थोऽसि ज्ञातुमेवंविधं नरम्।

अर्थात् हे महर्षि आप समर्थ हैं, कृपया मुझे ऐसे मनुष्य के बारे में बताएँ।

वाल्मीकि महर्षि के प्रश्न का उत्तर देते हुए नारद मुनि पुनः इस बात को प्रमाणित करते हैं वे कहते हैं-

मुने! वक्ष्याम्यहं बुद्धवा तैर्युक्त: श्रूयतां नर:।

अर्थात् हे मुनि! जिन-जिन गुणों का वर्णन आपने किया है वे अत्यन्त दुर्लभ हैं किन्तु उन गुणों से अलंकृत मनुष्य के बारे में मैं कहता हूँ आप ध्यान से सुनिए। इस प्रकार यहाँ स्पष्ट है कि वाल्मीकि दुर्लभ मानवीय गुणों से युक्त मनुष्य के बारे में ही नारद से पूछ रहे हैं और नारद भी ऐसे सर्वगुणसम्पन्न मनुष्य के बारे में वर्णन कर रहे हैं।

इससे पूर्व कि यहाँ कथित, भगवान राम के गुणों के बारे में चर्चा करें यह जानना आवश्यक है कि वाल्मीकि इस उत्कृष्ट कृति का प्रणयन कैसे कर पाए? वर्णन मिलता है कि देवर्षि नारद के जाने के पश्चात् तमसा नदी के तट पर स्नान करने चले गए। वहाँ एक करुण घटना घटी। एक क्रौंच पक्षी युगल प्रेम क्रीड़ा में मग्न था कि एक शिकारी के तीर से उन में से एक मृत्यु को प्राप्त हुआ। इस करुण दृश्य को देख अकस्मात् ऋषि के मुख से एक श्लोक निकल पड़ा।

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगम: शाश्वती: समा:।
यत् क्रौंचमिथुनादेकमवधी: काममोहितम्।। – बालकाण्ड, द्वितीय सर्ग, १५वाँ श्लोक

अर्थात्- हे निषाद! तुम बहुत दिनों तक इस संसार में प्रतिष्ठा तथा जीवन से वंचित रहो, क्योंकि परस्पर काम-क्रीड़ा में संलग्न नर क्रौंच पक्षी को मारकर तूने गुरुतर अपराध किया है।

मादा क्रौंच के रुदन को सुन मुनि ने उक्त श्लोक कह तो दिया, पर मुनिवृत्ति का व्रत लेने वाले साधकों को क्रोध से विरत् रहना चाहिए यह सोचकर उन्हें संभवतः पश्चाताप हुआ तो वे अपने शिष्य भारद्वाज से बोले कि- 'मुझ शोकार्त के मुख से निकला यह श्लोक जिसमें श्लोक के समस्त गुण विद्यमान हैं श्लोक न कहावे।' हमने यहाँ उक्त तथ्य को इसलिए लिखा है कि इस श्लोक में प्रस्तुत श्लोक के तत्वों को प्रदर्शित करते हुए कहा है कि यह पादों (चरणों) में बँधा, अक्षरों से सम, वीणा की लय से युक्त है। किसी भी श्लोक में और क्या विशेषता चाहिए? अर्थात् अनुष्टुप् छन्द में गुन्थित उक्त 'मा निषाद ....' श्लोक आदर्श काव्य का अंग बनने की समस्त अर्हताओं को प्राप्त है। यह वाल्मीकि ऋषि की काव्य प्रतिभा तथा मानवीय संवेदनाओं का परिचायक होकर उन्हें इसी छन्द में राम जैसे महानतम पुरुष के जीवन चरित्र को रचने के लिए सर्वथा उपयुक्त पात्र घोषित करता है। यह तो सम्भव है कि इससे पूर्व महर्षि वाल्मीकि ने कोई पद्य न रचा हो और करुणा के प्रभाव में यह प्रथम श्लोक उनके मुखारविन्द से प्रस्फुटित हुआ हो परन्तु यह उनकी अन्तर्निहित योग्यता को निश्चित रूप से प्रमाणित करता है। वाल्मीकि के जीवन चरित्र की विशेष उपलब्धता के अभाव में उनके जीवन के बारे में क्लिष्ट कल्पनाओं, कि वे पहले डाकू थे और 'मरा-मरा' करते करते राम-राम करने लगे आदि-आदि को खंडित करता है। महर्षि वाल्मीकि स्वयं को प्रचेतस ऋषि का पुत्र बताते हैं। ऋषि तुल्य व्यवहार तथा जीवन यापन और नैसर्गिक प्रतिभा, योग साधना उनके ऋषित्व पर मोहर लगाती है।

इसके बाद भगवान ब्रह्मा से इनका जो वार्तालाप होता है वह भी उक्त कथन को प्रमाणित करता है। ब्रह्मा कहते हैं कि- 'हे

ऋषियों में श्रेष्ठ! आप धर्मात्मा बुद्धिमान भगवान राम के सम्पूर्ण चरित को लोक में प्रकट करो। उस बुद्धिमान राम का रहस्य तथा प्रकट रूप जैसा भी चरित आपने नारद से सुना है, वैसा धीर राम का चरित कहो। लक्ष्मण से युक्त राम का, राक्षसों का तथा वैदेही का जो भी प्रकट और एकान्त में व्यवहार हुआ उस सबको कहो।'

अब यहाँ विचारणीय है कि श्री राम के जीवन की सभी मुख्य-मुख्य बातें नारद जी ने बता दीं परन्तु जीवन चरित लिखने में तो प्रत्येक घटना के विस्तार तथा अन्दर-बाहर की सभी जानकारी अपेक्षित है। इसकी जानकारी वाल्मीकि जी को कहाँ से मिली? क्या उन्होंने कल्पना के घोड़े दौड़ाए? यहाँ ब्रह्मा जी ने दो बातें और कहीं उन पर ध्यान देना होगा कि इन चरित्रों के आन्तरिक व्यवहार की बातें भी लिखो और साथ ही कहा कि तुम्हारी वाणी कभी झूठी नहीं होगी। आपको जो अज्ञात है वह भी ज्ञात हो जाएगा। यह कहने का क्या रहस्य था? इसका उत्तर हमें आगे मिलता है-

सर्ग २ के प्रथम सात श्लोक इस पर प्रकाश डालते हैं। यह भी कि रामायण में वाल्मीकि का कथन प्रामाणिक है क्योंकि उनके द्वारा यथावत् जानकर कहा गया यह **'यथावत् संप्रपश्यति' 'तत्सर्वं चान्वेक्षितं'** से द्योतित होता है। महर्षि वाल्मीकि ने योगबल के द्वारा राम आदि के ज्ञात-अज्ञात जीवन को देखा-जाना यह निम्न श्लोकों में स्पष्ट कथित है-

'ततः पश्यति धर्मात्मा तत्सर्वं योगमास्थितः। पुरा यतत्र निर्वृत्तं पाणावामलकम् यथा'

अर्थात् योग में (समाधि) स्थित होकर धर्मात्मा वाल्मीकि ने श्री राम के द्वारा बन में जो कुछ कार्य हुआ, उस सबको हाथ पर रखे हुए आँवले के समान देखा।

तत्सर्वंतत्त्वतो दृष्ट्वा धर्मेण स महाद्युतिः। अभिरामस्य रामस्य चरितं कर्तुमुद्यतः।।

अर्थात् महाज्ञानी (वाल्मीकि) योग द्वारा दर्शनीय राम के उस सब वृत्त को यथावत् रूप से जानकर उस सारे को काव्यबद्ध करने को तैयार हुए।

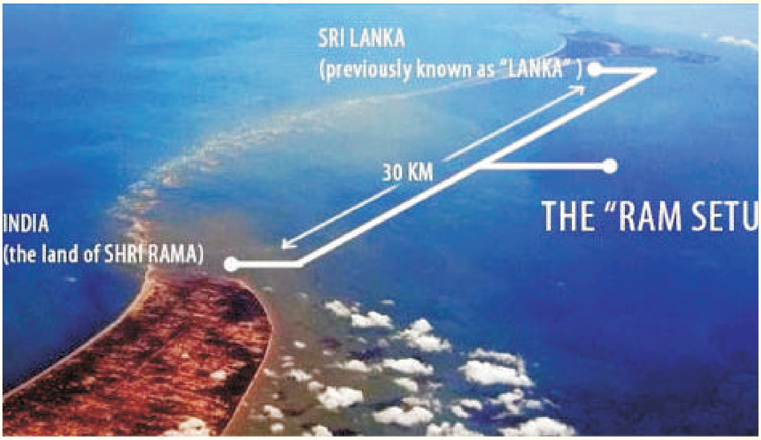

वाल्मीकि रामायण में घटनाओं का और उनके इर्द-गिर्द के परिवेश का इतना सजीव वर्णन है, जो प्रमाणित करता है कि महर्षि वाल्मीकि ने उस सब का वर्णन ऐसे किया जैसे वह सब साक्षात् उनके समक्ष था। रामायण में वर्णित भूगोल, जलवायु, वनस्पति आदि का जो वर्णन किया है वह रामायण काल में ऐसा ही था, सब विद्वानों द्वारा प्रमाणित किया जा रहा है, उस सबका वर्णन यहाँ देना सम्भव नहीं है। इसी कड़ी में फिर कभी वह जानकारी पाठकों के समक्ष रखेंगे। यहाँ केवल राम सेतु की बात करेंगे। वाल्मीकि रामायण में रामसेतु निर्माण का विवरण युद्ध काण्ड २२वें सर्ग के श्लोक संख्या १ से ८६ तक मिलता है। ऋषि ने इतना सजीव वर्णन इस निर्माण का किया है कि जैसे वे साक्षात् उसके निर्माण के दृष्टा रहे हैं। रामायण में इसे मानव निर्मित पुल बताया है और आज सेटेलाईट चित्रों, भूवैज्ञानिकों आदि द्वारा इसे प्रमाणित किया गया है। एक समाचार पत्र में छपी एक रिपोर्ट हम यहाँ पाठकों के लाभार्थ संक्षेप में उद्धृत कर रहे हैं-

'संकीर्ण राजनीतिक कारणों से अपने देश के लोग भले ही रामसेतु की ऐतिहासिकता और प्रामाणिकता को खारिज करते रहते हैं और उसे काल्पनिक बताते हैं, लेकिन भूगर्भ वैज्ञानिकों, आर्कियोलाजिस्ट की टीम ने सैटेलाइट से प्राप्त चित्रों और सेतु स्थल के पत्थरों और बालू का अध्ययन करने के बाद यह पाया है कि भारत और श्रीलंका के बीच एक सेतु का निर्माण किए जाने के संकेत मिलते हैं। वैज्ञानिक इसको एक सुपर ह्यूमन एचीवमेंट मान रहे हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार भारत-श्रीलंका के बीच ३० मील के क्षेत्र में बालू की चट्टानें पूरी तरह से प्राकृतिक हैं, लेकिन उन पर रखे गए पत्थर कहीं और से लाए गए प्रतीत होते हैं। भारत के दक्षिणपूर्व में रामेश्वरम और श्रीलंका के पूर्वोत्तर में मन्नार द्वीप के बीच उथली चट्टानों की एक चेन है। इस इलाके में समुद्र बेहद उथला है। समुद्र में इन चट्टानों की गहराई सिर्फ ३ फुट से लेकर ३० फुट के बीच है। इसे भारत में रामसेतु व दुनिया में एडम्स ब्रिज के नाम से जाना जाता है। इस पुल की लम्बाई लगभग ४८ कि.मी. है। रामसेतु भौतिक रूप में उत्तर में

बंगाल की खाड़ी को दक्षिण में शान्त और स्वच्छ पानी वाली मन्नार की खाड़ी से अलग करता है। साइंस चैनल ने 'व्हाट आन अर्थ एनसिएंट लैंड एण्ड ब्रिज' नाम से एक डाक्यूमेंट्री बनाई है। जिसमें भू-वैज्ञानिकों की तरफ से यह विश्लेषण इस ढाँचे के बारे में किया गया है।'

कुल मिलाकर यह संरचना कितनी पुरानी है, इसमें वर्त्तमान विद्वानों में भले ही मतैक्य न हो परन्तु इसके अति प्राचीन समय में मानव निर्मित होने में किसी को सन्देह नहीं। रामायण की सत्यता और ऐतिहासिकता के अनेक प्रमाणों में से यह एक है।

इस संक्षिप्त वर्णन से महर्षि वाल्मीकि की योग्यता, गुण-कर्म-स्वभाव के बारे में अनुमान लगाना सहज ही है। परन्तु कालान्तर में इनके जीवन को लेकर कई दन्त कथाएँ प्रचलित हो गयीं। ऐसी ही कथा नीचे प्रस्तुत कर रहे हैं।

'यद्यपि वाल्मीकि महर्षि प्रचेतस के पुत्र थे परन्तु बचपन में ही एक भीलनी इन्हें उठाकर ले गयी। वहाँ ये दस्युवृत्ति पर आश्रित हो गए, वाल्मीकि रत्नाकर के नाम से जाने जाते थे तथा परिवार के पालन हेतु लोगों को लूटा करते थे। एक बार उन्हें निर्जन वन में नारद मुनि मिले, तो रत्नाकर ने उन्हें लूटने का प्रयास किया। तब नारद जी ने रत्नाकर से पूछा कि- तुम यह निम्न कार्य किसलिए करते हो? इस पर रत्नाकर ने जवाब दिया कि अपने परिवार को पालने के लिए।

इस पर नारद ने प्रश्न किया कि तुम जो भी अपराध करते हो और जिस परिवार के पालन के लिए तुम इतने अपराध करते हो, क्या वह तुम्हारे पापों का भागीदार बनने को तैयार होंगे? इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए रत्नाकर, नारद को पेड़ से बाँधकर, अपने घर गए। वहाँ जाकर वह यह जानकर स्तब्ध रह गए कि परिवार का कोई भी व्यक्ति उनके पाप का भागीदार बनने को तैयार नहीं है। लौटकर उन्होंने नारद के चरण पकड़ लिए।

तब नारद मुनि ने कहा कि- हे रत्नाकर, यदि तुम्हारे परिवार वाले इस कार्य में तुम्हारे भागीदार नहीं बनना चाहते तो फिर क्यों उनके लिए यह पाप करते हो। इस तरह नारद जी ने इन्हें सत्य के ज्ञान से परिचित करवाया और उन्हें राम-नाम के जप का उपदेश भी दिया था, परन्तु वे 'राम' नाम का उच्चारण नहीं कर पाते थे। तब नारद जी ने विचार करके उनसे 'मरा-मरा' जपने के लिए कहा और 'मरा' रटते-रटते यही 'राम' हो गया और निरन्तर जप करते-करते हुए वह ऋषि वाल्मीकि बन गए।

यह दन्त कथा स्पष्टतः कपोलकल्पित है। रामायण में नारद मुनि से जो वाल्मीकि जी का वार्तालाप है वहाँ इस पूर्व मुलाकात का तनिक भी संकेत नहीं है। और सिर्फ एक नाम स्मरण करने से चाहे वह भगवान श्री राम का ही क्यों न हो और वह भी उल्टा, एक मूढमति रामायण जैसे अनुपम अतुल्य आदि काव्य का रचयिता नहीं हो सकता। योग सिद्धि अनायास नहीं हो जाती, यह हम महर्षि दयानन्द के जीवन में देख सकते हैं।

अतः जैसा हमने निवेदन किया कि जो दन्तकथाएँ महर्षि वाल्मीकि के बारे में प्रसिद्ध हैं वे उनके साथ न्याय नहीं करतीं। यह मानव स्वभाव की उस लालसा से निष्पन्न है जो घटनाओं को अलौकिक स्वरूप देकर उन्हें विशेष बनाकर महत्व देना चाहता है। वाह क्या बात है, एक डाकू एक नाम जपकर महर्षि बन गया।

केवल उपरोक्त वर्णन में ही उनके लिए प्रयुक्त विशेषणों पर ही ध्यान दें तो स्पष्ट होता है कि महर्षि वाल्मीकि धर्मज्ञ थे, बुद्धिमान थे, कवि थे, यम-नियमों का पालन करने वाले थे, मुनिवृत्ति के धारक थे, ब्रह्मा जी के अनुसार ऋषियों में श्रेष्ठ थे, योगी थे, तत्वज्ञ थे, प्रचेतस ऋषि के पुत्र थे आदि-आदि। यद्यपि अकेली रामायण महर्षि वाल्मीकि के सभी गुणों को उद्घाटित करती है फिर भी उक्त प्रामाणिक तथ्यों के प्रकाश में हमें महर्षि वाल्मीकि के इसी स्वरूप को ग्रहण करना चाहिए।

एक बात और, वैदिक धर्म में वर्ण-व्यवस्था गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर है। फिर महर्षि वाल्मीकि तो जन्म से भी ऋषि प्रचेतस के पुत्र थे और गुणों के आधार पर निश्चित ही ऋषि ही थे अतः समस्त मानवों को रामायण जैसी निधि देने वाले महर्षि को किसी एक जाति से सम्बद्ध कर उसी का पूज्यनीय बना देना प्रशस्त नहीं है। वे सर्वपूज्य हैं।

- अशोक आर्य
चलभाष- +919314235101, +918005808485

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वि-जन्मशताब्दी लेखमाला

(फरवरी–2024 तक प्रतिमाह एक लेख)

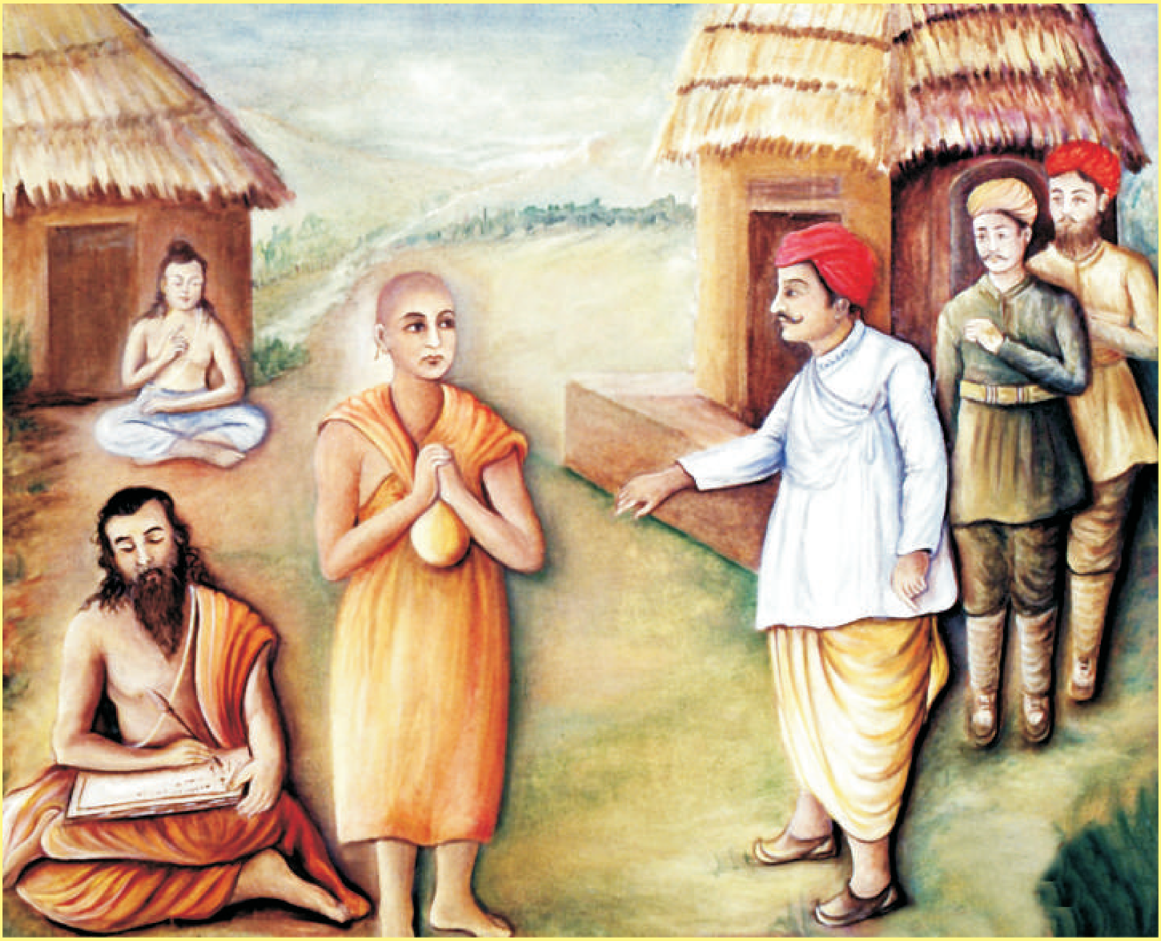

उन दिनों सिद्धपुर में बहुत बड़ा मेला लगता था जिसमें अनेक विद्वान् और योगी लोग आते थे। उनसे मिलने की चाह लिए शुद्ध चैतन्य ने सिद्धपुर पहुँचकर नीलकण्ठ महादेव के मन्दिर में आसन जमाया। उधर एक पूर्व परिचित वैरागी द्वारा शुद्ध चैतन्य जी के बारे में पिता को उनके सिद्धपुर जाने के बारे में पता चला। पिता तुरन्त कुछ सिपाहियों को लेकर सिद्धपुर मेले में पहुँच गए और अपने पुत्र के काषाय वस्त्रों को फाड़ दिया। परिस्थिति को देखकर शुद्ध चैतन्य ने पिता से क्षमा माँगी और वापस घर चलने की सहमति दे दी।

मानव सृष्टि में पुरुष और नारी का सृजन एक दूसरे के पूरक के रूप में किया है। सामान्य गुण-कर्म-स्वभाव, समान क्षमताओं, बराबरी के ओहदे के साथ-साथ अवश्य दोनों को कुछ विशिष्ट गुण, क्षमताएँ व विशेष कर्तव्य भी दिए गए हैं जिनके कारण वे एक दूसरे के पूरक भी हैं। अतः सृष्टि के संचालन में नर-नारी दोनों का समान महत्त्व है।

इन विशिष्ट कार्यों के सम्पादन के अतिरिक्त अन्य सभी कार्य दोनों ही कर सकते हैं। भारतीय संस्कृति में नर-नारी के मध्य कोई विभेद नहीं किया गया है। जब तक भारतीय समाज वैदिक शिक्षाओं से परिचालित रहा नारी को पूर्ण सम्मानयुक्त परिवेश व स्थान प्राप्त था। गृहस्थ में तो स्त्री को

ही केन्द्रीय भूमिका में माना गया है।

आचार्य चतुरसेन ने इसी तथ्य को अपनी पुस्तक 'आर्य-जाति विनाश की ओर' में प्रकाशित करते हुए लिखा है- 'यहाँ पर मैं भारत के चार महापुरुष- महर्षि दयानन्द, महात्मा गाँधी, स्वामी श्रद्धानन्द और राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद के विचार प्रस्तुत करता हूँ। सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि दयानन्द लिखते हैं-

'जिस घर में स्त्रियों का सत्कार नहीं होता वहाँ सब क्रिया निष्फल हो जाती हैं।'....ऐश्वर्य की कामना करने हारे मनुष्यों को योग्य है कि सत्कार और उत्सव के समय में भूषण, वस्त्र और भोजनादि से स्त्रियों का नित्यप्रति सत्कार करें। जिस घर में, कुल में, स्त्री लोग शोकातुर होकर दुःख पाती हैं वह कुल शीघ्र नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। जिस घर या कुल में स्त्री लोग आनन्द से उत्साह और प्रसन्नता में भरी रहती हैं वह कुल सर्वथा बढ़ता रहता है।

महात्मा गाँधी हिन्दी-नवजीवन दि. ७ अगस्त १९२९ के अंक में लिखते हैं-

'हिन्दू सभ्यता में तो स्त्री का इतना सम्मान किया गया है कि प्राचीन काल में स्त्री का नाम प्रथम पद रखता था। उदाहरणार्थ हम 'सीता राम' कहते हैं, 'राम सीता' कदापि नहीं। विष्णु का 'लक्ष्मीपति' नाम प्रसिद्ध है ही। महादेव को हम पार्वती-पति के नाम से भी पूजते हैं। महाभारत ने द्रोपदी को और आदिकवि वाल्मीकि ने सीताजी को गौरव का स्थान दिया ही है। हम प्रातःकाल सतियों का नाम लेकर पवित्र होते हैं। जो सभ्यता इतनी उच्च है, उसमें स्त्रियों का दर्जा पशु या मिल्कियत के समान कदापि हो नहीं सकता। पत्नी की रक्षा करना और अपनी हैसियत के मुताबित उसके भरण-पोषण और वस्त्रादि का प्रबन्ध करना पति का आवश्यक धर्म है।'

नवजीवन के १०.१०.२९ अंक में महात्मा गाँधीजी फिर लिखते हैं-

'राम का यश सीताजी पर निर्भर है। सीताजी का राम पर नहीं। कौशल्या, सुमित्रा आदि भी मानस के पूजनीय पात्र हैं।

शबरी और अहल्या की भक्ति आज भी सराहनीय है। रावण राक्षस था, मगर मन्दोदरी सती थी। ऐसे अनेक दृष्टान्त इस पवित्र भण्डार में से मिल सकते हैं।'

स्वामी श्रद्धानन्द जी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'कल्याण-मार्ग का पथिक' में लिखते हैं- 'वैदिक आदर्श से गिरकर भी जो सतीत्वधर्म का पालन पौराणिक समय में आर्य महिलाओं ने किया है, उसी के प्रताप से भारत भूमि रसातल को नहीं पहुँची और उसमें पुनरुत्थान की शक्ति अब तक विद्यमान है। यह मेरा निज का अनुभव है। भारत माता का ही नहीं, उसके द्वारा तहजीब की ठेकेदार संसार की सब जातियों का सच्चा उद्धार भी उसी समय होगा जब आर्यावर्त्त की पुरानी संस्कृति जागने पर देवियों को उनके उच्चासन पर फिर से बैठाया जाएगा।'

राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी ने २६ सितम्बर १९५२ को दीक्षान्त भाषण में कहा था- प्राचीनकाल में हमारे देश में स्त्रियों का कितना महत्वपूर्ण व उत्कृष्ट स्थान रहा है और प्राचीन भारत की स्त्रियों ने बड़ी निपुणता तथा चतुरता के साथ बुद्धि और त्याग के बल पर गृह एवं अनेकानेक सामाजिक कार्यों में किस प्रकार भाग लिया और किस प्रकार वे समाज के सर्वांगीण विकास में सहायक रहीं। कहने की आवश्यकता नहीं कि वे गणित-शास्त्र, नीति-शास्त्र, धर्म-शास्त्र, अर्थ-शास्त्र, चिकित्सा-शास्त्र, गृहस्थ-शास्त्र आदि सभी विषयों में पारंगत थीं। सीता, सावित्री, गार्गी, लीलावती आदि स्त्री रत्नों के नाम लेते हुए आज भी हमारा मस्तक गर्व से ऊँचा हो उठता है। हमारे यहाँ की स्त्री-जाति का चरित्र प्राचीनकाल से उन्नत और उनकी परम्परा उज्ज्वल थी। उनके चरित्र आज भी नारी जाति के सन्मुख ज्वलन्त उदाहरणस्वरूप उपस्थित किये जा सकते हैं। (भारत सरकार द्वारा प्रकाशित राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद के भाषण पृष्ठ २१६)

मध्यकाल में विदेशी आक्रान्ताओं ने जब भारत पर आधिपत्य स्थापित किया तब अनेक कारणों से महिलाओं पर बंधन आरोपित किये गए। उनकी शिक्षा पर प्रतिबन्ध लगाए गए। उनकी स्वतंत्रता को बाधित किया गया। बाल विवाह प्रचलित हुआ जिसे महर्षि दयानंद ने देश के बिगाड़ में मूल कारण माना। इस सब के मूल में प्रथम तो ऐतिहासिक परिस्थितियाँ जिम्मेदार थीं पर बाद में ये कुरीतियाँ परम्परा बन गयीं। कालांतर में स्वयं स्त्रियों के निकट भी यह सब स्थिति और तिरस्कार सामान्य होता चला गया। यह ऐसा समय आ गया कि आदि शंकराचार्य जैसे विद्वान् ने भी नारी को नरक का द्वार कहने में संकोच नहीं किया।

(प्रश्नोत्तरी के नाम से श्री स्वामी शंकराचार्य रचित एक पुस्तिका गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित है जिसमें तीसरा श्लोक है-

संसार हत्कः श्रुतिजात्मबोधःको मोक्ष हेतुः कथितः स एव द्वारं किमेकं नरकस्य नारी का स्वर्गदा प्राणभृतामहिंसा

अर्थात् नरक का प्रधान द्वार अथवा एकमात्र द्वार क्या है? उत्तर दिया है- नारी।

वेद के स्वाध्याय में अधिकार-अनधिकार के क्रम में भी स्थितियों में परिवर्तन हुआ। अब मनुष्य मात्र के वेद-स्वाध्याय के अधिकार का निषेध कर मुट्ठी भर ब्राह्मणों (जन्माधारित)तक उसे सीमित कर दिया गया। नारी को वेद स्वाध्याय के अधिकार की तो कथा ही क्या की जाय, अगर भूल से भी उसके कानों में वेदमंत्र पड़जाय तो उसके लिए सजा का प्रावधान कर दिया गया। विधान किया गया कि यदि स्त्री और शूद्रों के कानों में वेदमंत्र पड़ जायं तो उनके कानों में पिघला हुआ शीशा डाल दिया जाय।

जिस देश में नारी ने ऋषिकाओं के रूप में वेदमंत्रों का साक्षात् किया हो, अपाला, घोषा, रोमशा जैसी अनेक

ऋषिकाएँ समाज में पूजी जाती रही हों, गार्गी जैसी विदुषियाँ शास्त्रार्थों में विपक्षी को शान से पराजित करती रही हों, कैकेयी जैसी वीरांगनाएँ युद्ध में न केवल पति का साथ निभातीं हों वरन् आवश्यक होने पर युद्ध कौशल का परिचय देते हुए अपने पति तथा सम्राट् की जीवन रक्षक बन जाती हों, उस देश की नारी की यह दयनीय दशा किसी भी सहृदय भारतीय संस्कृति के उपासक के लिए असहनीय थी।

भारत के महापुरुषों ने समय-समय पर इस स्थिति से नारी के त्राण के प्रयास किये, आवाज उठायी, जिसमें सबसे प्रखर आवाज महर्षि दयानन्द सरस्वती की थी। महर्षि की दृष्टि ने नारी से वेद के पठन पाठन, यज्ञ व यज्ञोपवीत के अधिकार को छीन लिए जाने को नारी-असम्मान के प्रमुख कारण के

रूप में देखा। उनकी पीड़ा को हम उनके अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में देख सकते हैं। ऋषि ने वहाँ प्रश्न उठाकर प्रश्नोत्तर

शैली में उत्तर दिया है-

'क्या स्त्री और शूद्र भी वेद पढ़ें? जो ये पढ़ेंगे तो हम फिर क्या करेंगे? और इनके पढ़ने में प्रमाण भी नहीं है, जैसा यह निषेध है- **'स्त्री शूद्रौ नाधीयतामिति श्रुते'** स्त्री और शूद्र न पढ़ें, यह श्रुति है।

इसका उत्तर देते हुए ऋषि दयानद लिखते हैं- **'सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्य मात्र को पढ़ने का अधिकार है।** तुम कुआँ में पड़ो, और यह श्रुति तुम्हारी कपोल कल्पना से हुयी है। किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं। और सब मनुष्यों के वेदादि शास्त्र पढ़ने-सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के छब्बीसवें अध्याय में दूसरा मन्त्र है-

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्याꣳशूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय च।।

अर्थ- परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिए (इमाम) इस (कल्याणी) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देनेहारी (वाचं) ऋग्वेद आदि चारों वेदों की वाणी का (आवदानि) उपदेश करता हूँ, वैसे तुम भी किया करो।

वे आगे स्पष्ट करते हैं कि उक्त मन्त्र में 'ब्रह्म राजन्याभ्याम्' ब्राह्मण और क्षत्रिय वर्ण के लिए, 'अर्याय' वैश्य के लिए 'शूद्राय' शूद्र के लिए 'स्वाय' अपने भृत्य वा स्त्रियादि के लिए तथा 'अरणाय' अतिशूद्रादि के लिए आया है जिससे वेदों का प्रकाश मनुष्य मात्र के लिए होना सिद्ध है। अतः किसी भी मनुष्य को वेदादि पढ़ने से वंचित नहीं किया जा सकता। अब महर्षि दयानन्द प्रतिप्रश्न भी कर देते हैं कि 'कहिये अब तुम्हारी बात मानें वा परमेश्वर की? परमेश्वर की बात अवश्य माननीय है।'

महर्षि दयानन्द आगे पूछते हैं- 'क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता? क्या परमेश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने-सुनने का शूद्रों के लिए निषेध और द्विजों के लिए विधि करे? यहाँ दयानन्द एक और असाधारण तर्क प्रस्तुत करते हैं- 'जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ाने-सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्न आदि पदार्थ सब के लिए बनाए हैं वैसे ही वेद भी सबके लिए प्रकाशित किये हैं।'

ऊपर उद्धृत वेदमंत्र के बाद महर्षि दयानन्द पुनः वेद का प्रमाण देते हैं-

ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्। (अथर्व. ३.२४.११.१८)

यहाँ स्पष्ट कथन है कि लड़कों की भाँति कन्या भी पूर्ण विद्या और सुशिक्षा प्राप्त करें। ऋषि लिखते हैं- 'इसलिए स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिए।'

अभी कुछ दशाब्दियों पूर्व कलकत्ता में एक प्रख्यात महिला साहित्यकार को धर्म के ठेकेदारों ने गायत्री मन्त्र के उच्चारण से रोक दिया था। ऐसे में दयानन्द द्वारा दिया प्रमाण देखना चाहिए - **'इमं मन्त्र पत्नी पठेत'** अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मन्त्र को पढ़े।' यहाँ ऋषि प्रश्न करते हैं कि 'अगर स्त्री वेदादि शास्त्रों को न पढ़ी हो तो यज्ञ में स्वर सहित मन्त्रों का उच्चारण और संस्कृत भाषण कैसे कर सके?' यहाँ स्त्री का वेदपाठ के साथ यज्ञाधिकार भी सिद्ध हो गया। शास्त्रों के प्रमाण के पश्चात् ऋषि इतिहास से भी प्रमाण देते हैं कि वास्तव में भारतवर्ष में स्त्रियों को ये अधिकार प्राप्त थे। वे लिखते हैं- 'भारतवर्ष में स्त्रियों में भूषणरूप गार्गी आदि वेदादि शास्त्रों को पढ़के पूर्ण विदुषी हुयीं थीं, यह शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट लिखा है।

दयानन्द अध्यापन, राज्यसेवाओं, न्यायायिक सेवाओं के साथ साथ सेना में भी महिलाओं की भागीदारी की स्पष्ट संस्तुति करते हैं और इतिहास से निम्न उदाहरण इसलिए देते हैं कि यह सब कोरी कल्पना नहीं है, भारत में यह सामान्य ही था। वे सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं-

'देखो, आर्यावर्त्त के राजपुरुषों की स्त्रियाँ धनुर्वेद अर्थात् युद्ध विद्या भी अच्छी प्रकार जानतीं थीं। क्योंकि जो न जानतीं होतीं तो केकैयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध में क्योंकर जा सकतीं और युद्ध कर सकतीं?' वे स्त्रियों के लिए व्याकरण, वैद्यक, गणित तथा शिल्प विद्या आदि का पढ़ना तो अनिवार्य मानते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन भारत में नारी को अत्यन्त सम्मानित स्थान प्राप्त था। मध्यकाल में अवश्य नाना प्रकार की कुरीतियों ने उनके चतुर्मुखी विकास को जकड़ लिया था। स्वामी दयानन्द ने प्रमाण पुरस्सर तरीके से इस की जड़ों पर प्रहार कर नारी स्वातन्त्र्य तथा नारी सम्मान की जो आधारशिला रखी उसे इतिहास में सदैव कृतज्ञता के साथ देखा जाएगा। क्रमशः .....

- अशोक आर्य, कार्यकारी अध्यक्ष-न्यास
चलभाष- ०९३१४२३५१०१, ०८००५८०८४८५

हिन्दी को भी चाहिए संक्रमण से मुक्ति

किसी राष्ट्र को समझना हो तो उसकी संस्कृति को समझना आवश्यक है। उसकी संस्कृति को समझने हेतु वहाँ की भाषा का ज्ञान भी आवश्यक है। विश्व के लगभग सभी देशों की अपनी अपनी राजभाषाएँ हैं जिनके माध्यम उनके देशवासी परस्पर संवाद, व्यवहार, लेखन, पठन-पाठन इत्यादि कार्य करते हैं। स्वभाषा ही व्यक्ति को स्वच्छंद अभिव्यक्ति, सोचने की शक्ति, विचार, व्यवहार, शिक्षा व संस्कार प्रदान करते हुए उसके जीवन को सुखमय व समृद्ध बनाती है। हम जितना अपनी मातृभाषा में प्रखरता व प्रामाणिकता से अपने विचारों की अभिव्यक्ति कर सकते हैं उतना किसी अन्य भाषा में नहीं। हमें गर्व है कि विश्व की सर्वाधिक बोले जाने वाली भाषाओं में हिन्दी का तीसरा स्थान है, तथा इसे बोलने वाले देश में सबसे अधिक हैं।

इतना सब कुछ होने के बावजूद भी यह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारी आज तक कोई राष्ट्रभाषा नहीं है। हमारे संविधान के अनुच्छेद ३४३ (१) में यह तो कहा गया है कि भारत की राजभाषा 'हिन्दी' और लिपि 'देवनागरी' है। किन्तु इसे राष्ट्र भाषा बनाए जाने के अब तक के सभी प्रयास असफल ही रहे। इसे राजभाषा का स्थान १४ सितम्बर १९४९ को मिला था।

यदि इसकी पृष्ठभूमि में जाएँ तो पता चलता है कि राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने हिन्दी को जनमानस की भाषा बताते हुए १९१८ के हिन्दी साहित्य सम्मेलन में इसे राष्ट्रभाषा बनाने की बात कही थी। जवाहरलाल नेहरू जी ने भी हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने की वकालत तो की थी किन्तु उनके शासनकाल में ही हिन्दी को एक 'खिचड़ी भाषा' के रूप में विकसित करने का अतार्किक और अवैज्ञानिक प्रयास किया गया। उनका मानना था कि हिन्दी में देश की सभी भाषाओं के शब्दों को सम्मिलित कर एक ऐसी 'खिचड़ी भाषा' बना ली जाए जिस पर किसी को आपत्ति ना हो। उन्होंने हिन्दी को 'हिन्दुस्तानी' (हिन्दी और उर्दू का मिश्रण) भाषा बनाने का समर्थन किया था। यह प्रयास देखने में तो उस समय अच्छा लगा, परन्तु, वास्तव में यही विचार हिन्दी का सर्वनाश करने वाला सिद्ध हुआ।

संयोगवश, गत कुछ माह से मुझे लगातार हिन्दी के साथ साथ रेडियो से उर्दू भाषा में भी समाचार सुनने का सौभाग्य मिला। मैंने पाया कि एक ओर जहाँ उर्दू के समाचारों में हिन्दी का एक शब्द भी ढूँढे नहीं सुनाई नहीं देता था तो वहीं हिन्दी का कोई भी समाचार ऐसा नहीं था जिसमें उर्दू या अंग्रेजी भाषा की घुसपैठ ना हो। तभी मेरे मन में प्रेरणा जागी कि क्या हम अपनी राजभाषा के संक्रमण की मुक्ति हेतु कुछ नहीं कर सकते!

प्रतिवर्ष १४ सितम्बर आते ही हम हिन्दी बोलने, लिखने, कहने, सुनने, सुनाने इत्यादि के लिए बड़े-बड़े प्रचार माध्यमों का प्रयोग तो करते हैं किन्तु दशकों से अपनी स्व-भाषा में हुए व्यापक संक्रमण की मुक्ति हेतु कोई विचार व्यवहार में नहीं ला पाते। ये संक्रमण हिन्दी भाषा में इतना गहराई से पैठ बिठाए हुए है कि हमें कभी पता ही नहीं चलता कि ये शब्द वास्तव में हिन्दी के नहीं हैं। महत्वपूर्ण बात यह भी है कि शब्दों के इस संक्रमणकारी जंजाल से हमारे भाषाई साहित्यकार भी अछूते नहीं रहे। और उन शब्दों को निकाल

कर आपको यह कहा जाए कि इनका हिन्दी समानार्थी बताओ तो आपको लगेगा कि ये तो हिन्दी के ही हैं। इन घुसपैठिए शब्दों के प्रचार-प्रसार में हिन्दी समाचार पत्र-पत्रिकाओं, चलचित्रों, इत्यादि साधनों का विशेष स्थान

है। हिन्दी के संक्रमण मुक्ति हेतु सबसे पहले उन्हें पहचानना होगा। और उसके बाद उन्हें भगाना होगा। आज मैंने बड़ा ध्यान लगा कर २२७ शब्दों की एक प्रारम्भिक सूची उन उर्दू के शब्दों की बनाई जो हिन्दी की आत्मा पर सीधा प्रहार कर रहे थे। आओ! उनमें से कतिपय शब्दों पर विचार करते हैं..

विचार आया कि क्या हम अखबार को समाचार पत्र, आजादी को स्वतंत्रता, आबादी को जन-संख्या, आम को सामान्य, आराम को विश्राम, आवाज को ध्वनि, इंतजाम को प्रबन्ध, इंतजार को प्रतीक्षा, इंसान को मनुष्य, इजाजत को आज्ञा, इवादत तो प्रार्थना, इज्जत को मान या प्रतिष्ठा, इलाके को क्षेत्र, इलाज को उपचार, इश्तिहार को विज्ञापन, इस्तीफे को त्यागपत्र, ईमानदार को निष्ठावान, उम्र को आयु, एतराज को आपत्ति, एहसान को उपकार, कत्ल को हत्या, अक्ल को बुद्धि, कर्ज को ऋण, कमी को अभाव, करीब को समीप, कसूर को दोष, कातिल को हत्यारा, काबिल को सक्षम, कामयाब को सफल, किताब को पुस्तक, किस्मत को भाग्य, कीमत को मूल्य, कुदरत को प्रकृति, कोशिश को प्रयास, खतरनाक को भयानक, खराब को बुरा, खराबी को बुराई, खारिज को रद्द, खूबसूरत को सुन्दर, गिरफ्तार को बंदी, गुनाह को अपराध, गुलाम को दास, जबरदस्ती को दबाव पूर्वक, जरूर को अवश्य, जल्दी को शीघ्र, जानवर को पशु, जिन्दगी को जीवन, ज्यादा को अधिक, झूंठ को मिथ्या, तरीका को ढंग, तस्वीर को चित्र, तारीख को दिनांक, तेज को तीव्र, दुश्मन को शत्रु, धोखा को छल, नतीजे को परिणाम, परेशान को दु:खी, फीसदी को प्रतिशत, फैसले को निर्णय, वजह को कारण नहीं बोल सकते। इन सभी २२७ शब्दों को मेरे ट्विटर/vinod_bansal पर या फेसबुक पर जाकर देख सकते हैं।

अब कुछ उदाहरण अंग्रेजी की घुसपैठ के.. एक व्यक्ति अपनी पत्नी से कहता है- 'आज तो कोई ऐसा डेलिशियस फूड बनाओ कि 'मूड फ्रेश हो जाए'। महोदय ऑफिस पहुँचे तो बहस का 'स्टुपिड' टाइप सम्बोधन। हमारी सुबह की चाय 'बेड-टी' तो शौचादिनिवृति 'फ्रेश हो लो' का सम्बोधन बन चुकी। कलेवा (नाश्ता) ब्रेकफास्ट बन गया तो दही 'कर्ड'। अंकुरित 'स्पराउट्स' तो पौष्टिक दलिया 'ओट्स', सुबह की राम राम 'गुड मार्निंग' तो शुभरात्रि 'गुड नाईट' में बदल गई। नमस्कार 'हेलो हाय' में तो 'अच्छा चलते हैं' 'बाय' में रूपान्तरित हो चुका। माता 'माम' तो पिता 'पाप' हो लिए। चचेरे, ममेरे व फुफेरे सम्बन्ध सब 'कजन' बन चुके तो, गुरुजी 'सर' में बदल गए तथा गुरुमाता 'मैडम'। भाई 'ब्रदर', बहन 'सिस्टर' तो दोस्त आज 'फ्रेंड' हैं। लेख 'आर्टिकल' तो कविता 'पोएम' निबन्ध 'ऐसए', पत्र 'लेटर', चालक 'ड्राइवर' परिचालक 'कंडक्टर', वैद्य 'डॉक्टर' हँसी 'लाफ्टर', कलम 'पेन' पत्रिका 'मैग्जीन', उधार 'क्रेडिट' तथा भुगतान 'पेमेंट बन गया। कुल मिला कर बात यह है कि हम चाहे हिन्दू हैं, हिन्दी हैं, हिंदुस्थानी हैं किन्तु हिन्दी को नहीं बचा पाए!

आओ इस बार के हिन्दी दिवस को हम एक प्रेरणा दिवस के रूप में मनाएँ। आज से ही प्रारम्भ करें कि जब भी हम हिन्दी में बोलेंगे, लिखेंगे, कहेंगे, सुनेंगे, गाएँगे, गवाएँगे तो सिर्फ हिन्दी के ही शब्दों का प्रयोग करेंगे और भाषा में हुई घुसपैठ के विरुद्ध एक अभियान छेड़कर पहले घुसपैठियों को ठीक से पहचानेंगे, विकल्प देखेंगे और उसे पूरी तरह से संक्रमण मुक्त कर स्वभाषा के गौरव को जन जन तक पहुँचाएंगे।

हिन्दी है माथे की बिन्दी,
इसका मान बढ़ाएंगे।
हम सब भारतवासी मिलकर,
इसको समृद्ध बनाएँगे।।

- विनोद बंसल,
'लेखक विश्व हिन्दू परिषद के राष्ट्रीय प्रवक्ता हैं'

न्यास द्वारा प्रकाशित सत्यार्थ प्रकाश
रु.100 के स्थान पर अब रु.45 में उपलब्ध
सौ प्रतियाँ लेने पर रु.4000
(डाक खर्च अतिरिक्त)

रु.15000 सत्यार्थ प्रकाश प्रचार सहयोग राशि देकर एक हजार प्रतियों पर अपना वा अपने किन्हीं परिचित का विवरण फोटो सहित छपवावें।

न्यायार्थ

अपने जीवनसाथी अथवा परिजनों का विरोध भी अनुचित नहीं

एक इजराइली लघुकथा पढ़ रहा था। एक व्यक्ति की पत्नी अपनी नौकरानी पर आरोप लगाती है कि उसने उसके घर से एक कीमती बरतन चुरा लिया है। पति नौकरानी से बरतन की चोरी के बारे में पूछता है तो वो मना कर देती है। पति को विश्वास हो जाता है कि नौकरानी ने बरतन नहीं चुराया लेकिन पत्नी नहीं मानती। पत्नी कहती है कि मैं इसे अदालत में सजा दिलवाऊँगी। वह अदालत में जाने के लिए तैयार होने लगती है तो पति भी उसके साथ जाने के लिए तैयार होने लगता है। पति को तैयार होता देख पत्नी कहती है कि तुम्हें मेरे साथ जाने की जरूरत नहीं है। मैं खुद निपट लूँगी। मुझे अदालत के कायदे-कानूनों की सारी जानकारी है। पति ने कहा, "बेशक तुम अदालत के सारे कायदे-कानून जानती हो लेकिन हमारी गरीब नौकरानी नहीं जानती। मैं उसके साथ जा रहा हूँ। मेरे होते हुए उस पर अन्याय कैसे हो सकता है?" वर्तमान राजनीतिक व सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ये लघुकथा अत्यन्त प्रासंगिक लगती है।

सबसे पहले तो ये स्पष्ट होना आवश्यक है कि इस प्रसंग का उद्देश्य पत्नियों को दोषी ठहराना बिल्कुल नहीं है। ये मात्र कथा है। हमारे यहाँ वास्तव में अधिकांश पत्नियाँ ही अपने पतियों की गलत बातों का विरोध करती आई हैं। इस दृष्टि से माओं की स्थिति थोड़ी भिन्न होती है। अधिकांश माएँ अपने बेटों का गलत पक्ष लेने में पीछे नहीं रहतीं। कथा में एक पति अपनी गरीब नौकरानी को अन्याय से बचाने के लिए अपनी पत्नी की अपेक्षा अपनी नौकरानी का साथ देने का निर्णय करता है। प्रश्न उठता है कि क्या हम पति या पत्नी के रूप में किसी को अन्याय से बचाने के लिए अपने जीवनसाथी के विरुद्ध जा सकते हैं? क्या हम हर हाल में सच्चाई के पक्ष में खड़े हो सकते हैं? कुछ लोग होंगे लेकिन अधिकांश के लिए ऐसा सोचना भी सम्भव नहीं हो सकता। चाहे वे कितने भी गलत अथवा दोषी क्यों न हों लेकिन हम हर हाल में प्रायः अपने जीवनसाथी, बच्चों, मित्रों अथवा परिचितों का साथ देते हैं। हम ऐसा क्यों करते हैं?

उनसे प्रेम के कारण? उन्हें विषम परिस्थितियों में बचाने के लिए? उनका सहयोग करने के लिए? लेकिन क्या ऐसा करके हम वास्तव में उन्हें सहयोग देते हैं? उन्हें बचाते हैं? उनसे प्रेम करते हैं?हाँ हम उन्हें बचाते हैं और उनसे सहयोग करते हैं लेकिन ऐसा करके प्रेम तो हरगिज नहीं करते। उनके नैतिक अथवा चारित्रिक विकास में योगदान नहीं करते।

किसी की गलत बात में उसका साथ देना प्रेम नहीं है। हाँ कोई निहित स्वार्थ हो सकता है। हम किसी न किसी स्वार्थ के लिए ही ऐसा करते हैं। हमें ऐसा ही सिखाया गया होता है कि हम हर हाल में अपनों के पक्ष में बोलें चाहे उन्होंने अपराध ही क्यों न किया हो। आज के राजनीतिक परिदृश्य की बात करें तो वहाँ तो ऐसा ही हो रहा है। पार्टी की गलत नीतियों अथवा कार्यों का विरोध तो दूर की बात, उनका अंध समर्थन किया जा रहा है। अपनी पार्टी की हर गलत-सही बात का समर्थन और दूसरों की सही बात का भी विरोध। क्या हममें इतनी नैतिकता भी नहीं बची कि दूसरों की सही बात को सही न कहें तो कम से कम उसका विरोध तो न करें। सही के विरोध और गलत के पक्ष में झंडे तो न उठाएँ।

क्या ऐसा हो सकता है कि हमारे अपनों की सारी बातें सही हों और दूसरों की सारी बातें ही गलत हों? हमारी अपनी

पार्टी की सारी नीतियाँ सही हों और दूसरी पार्टियों की सारी नीतियाँ ही गलत हों? ऐसा नहीं हो सकता लेकिन हम ऐसा ही मानते हैं। हर गलत-सही का समर्थन ही पार्टी के प्रति वास्तविक निष्ठा माना जाता है। हम पार्टी की हर गलत-सही बात का समर्थन करेंगे तो पार्टी भी हमारे लिए कुछ करेगी। अपनों की हर गलत-सही बात का समर्थन ही परस्पर प्रेम का द्योतक हो गया है। ऐसा नहीं करेंगे तो रिश्ते टूट जाएँगे। हम रिश्तों को बचाने के लिए ऐसा कर सकते हैं। गलत होने के बावजूद यदि हम अपने जीवनसाथी, बच्चों, मित्रों अथवा अन्य प्रियजनों के साथ होते हैं तो मात्र इसलिए कि हमसे गलती हो जाने की स्थिति में वे भी हमारे पक्ष में बोलें व हमारी सहायता के लिए तत्पर रहें। हम प्रायः एक दूसरे को ऐसा ही सहयोग देते हैं लेकिन इसमें जिस चीज का सबसे अधिक नुकसान होता है वह है सच्चाई और ईमानदारी।

वैसे भी जब हमारे परिवार के सदस्य, मित्र अथवा परिजन गलत मार्ग पर हों तो उनका बेजा पक्ष लेना वास्तव में उनका अहित करना है। जब तक इसके दुष्प्रभावों का पता चलता बहुत देर हो चुकी होती है। हम इन बातों पर अपने परिजनों अथवा जीवन साथी से सम्बन्ध-विच्छेद तो नहीं कर सकते लेकिन उन्हें समझा जरूर सकते हैं। उन्हें किसी का अहित करने अथवा किसी के साथ अन्याय करने के दुष्परिणामों के विषय में सचेत करके किसी का अहित अथवा किसी के साथ अन्याय न करने के लिए सहमत कर सकते हैं। मैथिलीशरण गुप्त जी ने कहा है कि न्यायार्थ अपने बन्धु को भी दण्ड देना धर्म है। बिल्कुल उचित है लेकिन हम अपने जीवन साथी अथवा अग्रजों को तो दण्ड नहीं दे सकते अतः सत्याग्रह का मार्ग अपनाया जा सकता है। सत्याग्रह का रास्ता अपना कर उन्हें सही मार्ग पर चलने के लिए विवश किया जा सकता है। इस स्थिति में यदि हम थोड़ा सा भी सुधार कर लें तो ये बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

एक बार मैं अपनी बहन से किसी बात पर नाराज था और इसी नाराजगी के चलते कई महीने तक उससे मिलने नहीं गया। इसी दौरान दीपावली भी आ गई। पत्नी ने पूछा कि दीदी के यहाँ कब जाओगे? मैंने कहा कि मुझे हरगिज नहीं जाना है। उन्होंने कहा कि आपको जाना चाहिए। मैंने कहा कि मुझे नहीं जाना। पत्नी ने आपको जाना चाहिए की बजाय कहा कि आपको जाना है और जरूर जाना है। मैं अपनी जिद पर अड़ा रहा तो वे भी अपनी जिद पर अड़ी रहीं। अगले दिन पूछा, "आज शाम को जा रहे हो?" नहीं। उससे अगले दिन खाना बन्द। सबको खिला दिया लेकिन खुद नहीं खाया। इस उपवास और सत्याग्रह का परिणाम सुखद ही रहा। अगले दिन सब लोग बहन के घर जा पहुँचे। जब पत्नियाँ पतियों को साड़ियाँ खरीदने और आभूषण बनवाने के लिए विवश कर सकती हैं तो उन्हें गलत दिशा में जाने से रोक कर सही मार्ग पर चलने के लिए भी विवश कर सकती हैं। कर सकती हैं नहीं करती हैं। जो अनुचित हो उसका निरन्तर विरोध और जो उचित हो उसके लिए निरन्तर आग्रह अनुचित नही अनिवार्य है।

हमें अपने बच्चों में प्रारम्भ से ही ऐसे संस्कार डालने चाहिए जिससे वे हमेशा सही के पक्ष में बोलना और गलत अथवा अन्याय का विरोध करना सीख जाएँ। इसके लिए माता-पिता को उनके सामने स्वयं का आदर्श प्रस्तुत करना होगा। कुछ लोग स्वयं तो कभी ईमानदारी और सच्चाई का पालन नहीं करते लेकिन बच्चों को ऐसा करने का उपदेश देते रहते हैं। वे मन से चाहते हैं कि उनके बच्चे ईमानदार और सत्यनिष्ठ बनें। लेकिन उनके मन से चाहने पर भी ऐसा नहीं हो पाता। वास्तव में माता-पिता द्वारा उनके स्वयं के उचित आचरण द्वारा ही बच्चों में उच्च नैतिक गुणों अथवा उदात्त भावों को स्थापित किया जा सकता है। यदि हम अपने बच्चों का गलत पक्ष लेना छोड़ दें तो भी वे बहुत अच्छे नागरिक बन सकते हैं। इस मामले में समाज की स्थिति तो किसी भी तरह से ठीक नहीं कही जा सकती। आज यदि किन्हीं दो पड़ोसियों के बीच कोई विवाद अथवा लड़ाई हो जाए तो आसपास के लोग प्रायः या तो दूर खड़े होकर तमाशा देखते हैं या फिर ताकतवर अथवा प्रभावशाली व्यक्ति के पक्ष में खड़े हो जाते हैं। तटस्थता से ही नहीं किसी गलत व्यक्ति का पक्ष लेने से भी बचना अनिवार्य है। इसके अभाव में समाज के किसी भी क्षेत्र में पूर्ण न्याय की स्थापना असम्भव है।

- सीताराम गुप्ता
ए. डी.- 106-सी, पीतमपुरा
दिल्ली- 110034

Maharshi Dayanand's Contribution to Indian Culture & Tradition

Maharshi Dayanand Saraswati was one of those great men to whom India owes a deep debt of gratitude. By his deep learning, by his lofty moral character, and by his steadfast adherence to what he believed to be true, he succeeded in changing the entire outlook of the Hindu society of his times. Swami Dayanand's contribution to religious, philosophical, cultural, educational, social and political thought form a great treasure to the world's literature. He has given a new meaning to human existence, and created new ideals for human achievements. Swami Dayanand did his best to revive the old cultural system of India, which had enriched the world and given rise to many a new cultural ideal. It may rightly be termed and interpreted as the mother of the present day cultures of the world.

For sometime past, however, there had been a distinct deterioration of Indian culture. As India had been a prey to foreign invaders, who had directly or indirectly tried to surpass her cultural ideals; and secondly, in the face of the more aggressive, dynamic, vitalizing cultures of the West, it had lost some of its beauties and dignified aims and imitated others by the law of conduct. Since the advent of Swami Dayanand on the cultural and religious field, India is gradually but surely reviving her lofty cultural ideals. Swami Dayanand's clarion call of 'Back to the Vedas' served as a check to the fatal headlong wave of materialization, and blind imitation of the unreal Western civilization, which had caught hold of the educated youths of this country. In the mean while, a positive appeal to the great religion of the Vedas, the subtle but elevating philosophy of the sacred Upanishads, the immortal and excellent verses of the Bhagavad Gita, Ramayana, Mahabharata, etc. so forcibly made by Swami Dayanand that produced the desired effect on the flexible minds of the Indian youths, i.e. both young boys and girls. Swami Dayanand, by explaining the Vedas in their true sense, has revived the

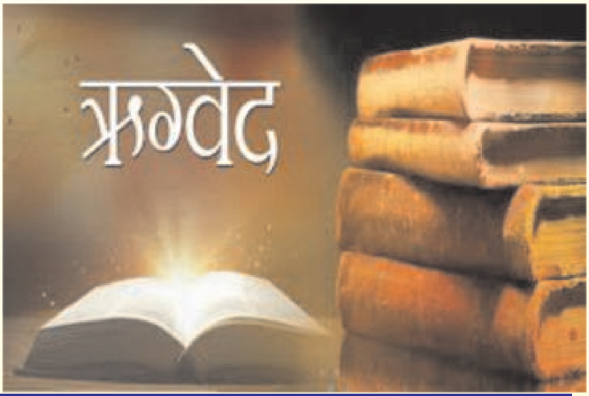

completely Indian Culture, glorified and made bright the name of India before the eminent and general Research oriented scholars of modern days. His interpretation of the Vedas and the revival of Indian Culture have really opened the eyes of the Western World and led them to admit the superiority and sublimity of Indian Culture. The oldest, the most simple, form of faith finds its expression in the Vedas. Without the Vedas, the new moral teachings of Lord Buddha would have not been possible. The Veda by its language and thought supplies that distant background in the history of all the religions of the world, which was missed by every careful observer. According to Prof. Roth, a renowned Sanskrit scholar, "the most ancient record of human civilization, literature and Religion are the Vedas."

Another Western scholar Prof. Max Müller, who called the Vedas as 'pastoral songs' in 1873 A.D., changed his negative views regarding Vedas and its subject matters. In his book, viz. 'India what can it Teach us', he speaks about the Vedic Culture as follows: "Vedic literature opens to us a chamber in the education of human race to which we can find no parallel any where else. Whoever cares for the historical growth of our language and thought; Whoever cares for the first intelligible development of religion and mythology; whoever cares for the first foundation of science, astronomy, grammar, and etymology; whoever cares for the first intimation of the philosophical thoughts, for the attempt at regulating family life as founded on religion, ceremonials, traditions and contract must in future pay full attention to the study of Vedic literature."

It was Swami Dayanand, who revived the learning of Hindi and Sanskrit and their use in speaking and writing. Dayanand placed the so-called 'dead language' – Sanskrit, the treasure, store, and mine of ancient Indian lore, on the high pedestal of foundation-head of all the Modern languages of the World. Besides, Swami Dayanand was a pioneer in the renaissance movement in India. Nationalism, Swadeshi movement, Widow- marriage, Female education, Care of the orphans, National education, Conversion of non-Hindus to Hinduism, Patriotism, the Dissemination of Vedic principles, Ideals and Culture, all owe a great deal to him.

In addition to these, Swami Dayanand's writings and his active participation in the process of regeneration and rejuvenation of India have become a source of inspiration to his fellow citizens in their struggles for National emancipation and cultural advancement. Swami Dayanand is in-fact a leader of humanity; and his unique contribution to the culture stands out as a great landmark in human progress. However, by interpreting the Vedas in their true light, he exhorted the educated and the learned to develop the arts, crafts, industries and sciences. He raised ethical and moral standards by making a strong and bold stand for the week, by dispelling their fears and misgivings, and above all, by enabling the people to develop their spiritual nature and reach the goal of emancipation. Swami Dayanand, a man of action, looked upon life as a combat, faced opposition steadfastly, hated mere talk, praised energetic action, and gave an impetus to the people, which are visible in so many departments of National life today. In a true sense, Swami Dayanand wanted to change the mind as well as the life style of the people of this country and even of the whole world. He really interested to reform the mind of the people. Hence, he desired to see every man as a noble one and even stressed to change the attitude of the

people for his all round development and true prosperity in the society. He wanted to civilize or Àryanise the world.

According to him, one should be a true Àrya or noble one to live properly in the society.

It means, he who is worthy to be approached for help in trouble, and whom people in distress run for relief there form—he is Àrya. The self-denying, other- helping, philanthropic person is the true Àrya. By saying repeatedly, the Vedic mantra 'कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम्', Dayanand was stressing for mental as well as cultural development of the people. He was very keen to see that every person should develop mentally, physically and culturally for building a new and modern society. It is true that Swami Dayanand wanted to realize the ideal of unifying India nationally, socially and religiously. To make Indians in one nation, he thought it was necessary to free it from foreign rule. In order to make the people of India socially one, he wanted to eliminate the differences of caste and class. To make India religiously one, he desired to substitute his Vedic religion prevalent in India. To see all castes under one umbrella, he established the Àrya Samaj in 1975 A.D. This society of the Àryas started for the revival and propagation of the oldest religion in the world, the Vedic Dharma. Regarding Dharma Swami Dayanand says: "that which is devoid of partiality, which inculcates justice and equality, which teaches truthfulness of thought, speech and deed, in a word, that which is in conformity with the will of God as embodied in the Vedas, even that I call Dharma."

He always inspired the people by removing social ailments from the body politic and proclaiming glad news of the Vedas—the only revealed work of the God and of true knowledge to all. For him it made no difference whether a man was born in a good or bad family. He wanted to knit the world in ties of common unity. Therefore, the Àrya Samaj and its democratic constitution grew out of the positive feelings of Swami Dayanand for the common people. Even the problem of International peace is the problem of expanding the era of love and social unity. The principle of "वसुधैव कुटुम्बकम्", of the consciousness of humanity and Internationalism in its practical aspect, is one of the Dayanand's greatest contributions to modern thought. Swami Dayanand firmly believed that the four Vedas, i.e. the Sanhitas onlywere the revealed books, meant for the welfare of the whole world. He held this view on the authority of the Vedas themselves. As said in the Yajurveda-

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानी जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्याꣳशूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय च।
प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह।
भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु।।

The great Swami Dayanand asserted, clearly says that 'this' VÁc, i.e. the Sacred Vedas was meant for every human-being. Furthermore, to him the Gayatri -mantra was meant for all mankind, including women, who, he held, were equally entitled to become brahmacari/ies and to read and even teach the Vedas. His positive views about this question pertinently seen in the Sméti tradition as:

पुराकल्पे तु नारीणां व्रतबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां गायत्री वचनं तथा।।

A reformer of such ideas could not but be a staunch supporter of female education and Swami Dayanand's advocacy of the cause is well known. He was totally against of child marriage, which, on the authority of the Règveda, he held to be un-Aryan. For him, and rightly, there was no dharma higher than falsehood-

नहि सत्यात् परो धर्मो, नानृतात् पातकं परम्।

The quintessence of Indo-Àryan Culture in

the eyes of Swami Dayanand was as under:
निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीरा।।

It means, whether he upbraided or praised, whether he dies or lives, a true Àrya or a noble person never deviates from the path of righteousness through out his life. It was for this very principle that he sacrificed his noble life. Verily, the definition of deva he has put down himself, is applicable to him. An embodiment of Brahmacarya and an undaunted preacher of Dharma, Swami Dayanand was throughout his career an excellent illustration of the true Indian or Àryan Culture. However, his burning and unparallel love for his country, his erudition, indefatigable labour, physical strength, fearlessness, dauntless spirit, invincible faith in the grandeur and loftiness of Vedic culture, passion for Swarajya and emancipation from intellectual, social and political bondage, love for truth and humanity, are traits, which serve as a model for the Indians in their onward path of resuscitation.

Before concluding, I would like to quote the words of Prof. R.L.Turner regarding Swami Dayanand's contribution to Indian Culture as:

“Whatever one may think of correctness of or otherwise of Swami Dayanand's interpretation of many Vedic passages, one cannot withheld one's admiration for a man whose work perhaps more than that of any other individual has helped to make India conscious of itself as a unity with some distinctive contribution to make the Culture of the World as a whole. कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।

- Dr. Narasingha Charan Panda
Professor of Sanskrit
Deptt. of V.V.B.I.S. & I.S., Panjab University
Sadhu Ashram, Hoshiarpur, Punjab-146021.

महाशोक

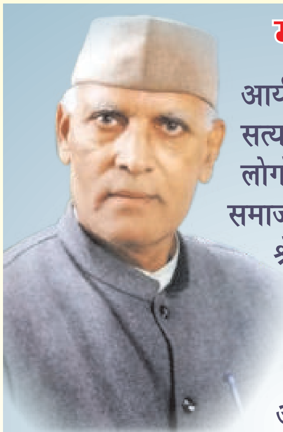

आर्य समाज के भजन सम्राट श्री सत्यपाल पथिक नहीं रहे। जिन लोगों ने अपने खून पसीने से आर्य समाज की बगिया को सींचा था उस श्रेणी में पंडित सत्यपाल जी का नाम प्रथम पंक्ति में निःसन्देह लिया जा सकता है। कोरोना से प्रभावित होने के बाद जब ये आशा बन्ध गई थी कि वे प्रभुकृपा से स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर लेंगे तभी उनके महाप्रयाण का शोक समाचार मिला। हम स्तब्ध हैं दुःख का कोई ओर–छोर नहीं। आर्य समाज के एक पूरे प्रचार युग को पंडित जी ने अपने में समेटा हुआ था। यह क्षति निःसन्देह अपूरणीय है। न्यास और सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से पूज्य पथिक जी को विनम्र श्रद्धांजली। परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को अपनी आनन्दमयी गोद में स्थान प्रदान करे और भाई दिनेश जी व अन्य परिवारीजनों को इस महान् दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करे।

– भँवर लाल गर्ग, कार्यालय मंत्री–न्यास

सत्यार्थप्रकाश प्रचार सहयोग निधि

- **सत्यार्थ प्रकाश से उत्कृष्ट कोई ग्रन्थ नहीं जिसके प्रकाशन में आपकी पुण्य दान राशि का प्रयोग हो।** सत्यार्थ प्रकाश प्रचार हेतु,कम राशि में अधिक संख्या में यह महान् ग्रन्थ जन–जन के हाथों में पहुँच सके, एतदर्थ निम्न योजना निर्मित की गई है:–
- सत्यार्थप्रकाश के प्रचार हेतु कृपया निम्नानुसार सहयोग कर **लागत मूल्य से आधी कीमत में** सत्यार्थप्रकाश का दिया जाना सुनिश्चित करें। आपके द्वारा सहयोगार्थ प्रदान की गई राशि के समक्ष अंकित प्रतियों पर आपका अथवा आपके किसी प्रियजन का चित्र ग्रन्थ पर दिया जावेगा।

राशि	प्रतियों की संख्या	राशि	प्रतियों की संख्या
१५००००	दस हजार	११२५००	७५००
७५०००	५०००	३७५००	२५००
१५०००	१०००	इससे स्वल्प राशि देने वाले दानवीरों के नाम ग्रन्थ में अंकित किये जायेंगे।	

आपका दान आयकर अधिनियम की धारा ८० जी के अंतर्गत करमुक्त होगा। राशि न्यास के नाम ड्राफ्ट या चैक द्वारा भेजें अथवा यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, उदयपुर खाता क्रमांक ३१०१०२०१००४१५१८ में जमा कर सूचित करें।

निवेदक

भवानीदास आर्य, मंत्री–न्यास
भंवरलाल गर्ग, कार्यालय मंत्री
डॉ.अमृत लाल तापड़िया, उपमंत्री–न्यास

पंडिता रमाबाई

एक मूल्यांकन मगर कुछ भिन्न दृष्टि से

पंडिता रमाबाई के नाम से प्रायः सभी आर्य समाज के लोग परिचित होंगे। स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रायः सभी जीवन चरित्रों में पंडिता रमाबाई का उल्लेख पाया जाता है। आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् लेखक डॉक्टर कुशलदेव शास्त्री ने 'महर्षि दयानन्द-काल और कृतित्व' ग्रन्थ में पंडिता रमाबाई के बारे में अनेक बातें लिखी हैं। स्वामी जी ने रमाबाई की सुकीर्ति सुनकर उन्हें अपने पास आने को विधिवत् आमंत्रित किया था और उनसे अपेक्षा रखी थी कि वह ब्रह्मचारिणी रहकर भारत की महिलाओं का उत्थान करने में अपना जीवन लगाएंगी। परन्तु रमाबाई इसके लिए तैयार नहीं थीं। स्वामी जी से उन्होंने वैशेषिक दर्शन आदि का कुछ अध्ययन भी किया था और संस्कृत में उनकी बहुत अच्छी गति थी। वह प्रभावी वक्ता थीं, परन्तु स्वामी जी के मनोरथों को साकार करने में वह अनुत्तीर्ण रहीं। आगे चलकर वह ईसाई हो गईं और उन्होंने भारत की हजारों असहाय निर्बल स्त्रियों को ईसाई मत में दीक्षित करने का कार्य किया। स्वामी दयानन्द जैसे महामानव का सान्निध्य पाकर भी व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता से कहाँ से कहाँ निकल जाता है इसका उदाहरण हमें पंडिता रमाबाई के जीवन में दृष्टिगोचर होता है। इन बातों से यदि आर्य समाज के द्वारा किया गया पंडित रमाबाई का मूल्यांकन अन्य लोगों के द्वारा किए गए उनके मूल्यांकन से भिन्नता रखता है तो वह स्वाभाविक ही है।

मेरे पास एक गुजराती ग्रन्थ है जिसका शीर्षक है- 'अरधी सदीनी वाचनयात्रा' अर्थात् आधी शताब्दी की वाचन यात्रा। इस ग्रन्थ के कुल ४ भाग हैं। इसके संपादक महेन्द्र मेघाणी हैं जो गुजरात के महान् साहित्यकार 'राष्ट्रीय शायर' झवेरचन्द मेघाणी जी के सुपुत्र हैं। झवेरचन्द मेघाणी ने महर्षि दयानन्द का एक जीवन चरित्र 'झंडाधारी' नाम से गुजराती में लिखा है जो बहुत लोकप्रिय है।

महेन्द्र मेघाणी द्वारा सम्पादित उपर्युक्त ग्रन्थ में सन् १९५० से लेकर २००० तक लिखे गए गुजराती के चुने हुए श्रेष्ठ लेख, काव्य आदि उत्तम ढंग से संकलित कर प्रस्तुत किए गए हैं। इस ग्रन्थ के प्रथम भाग में पृष्ठ ३३१ पर मूळशंकर प्रा. भट्ट द्वारा लिखित पंडित रमाबाई विषयक एक छोटा लेख प्रस्तुत किया गया है। मूळशंकर प्रा. भट्ट (१९०९-१९८४) गुजरात के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। उन्होंने पंडिता रमाबाई का चित्रण अपने ढंग से किया है, जिसे यहाँ हिन्दी में अनूदित कर प्रस्तुत किया जाता है-

पंडिता रमाबाई– रमा का जन्म दक्षिण कर्नाटक के एक गाँव में १८५८ में हुआ था। जब रमा छोटी थी तब उसे पिता अनन्त शास्त्री एवं माता के साथ तीर्थ यात्रा में सम्मिलित होने का सद् भाग्य मिला। उनके साथ एक भाई और दूसरी बहन- ये दोनों भी तीर्थ यात्रा में जुड़े। इस यात्रा में रास्ते में जो गाँव आते थे वहाँ रमा के पिताजी विद्वानों के साथ वाद-विवाद करते थे और आगे बढ़ते रहते थे। यह यात्रा लगभग १५ वर्ष चली। इस यात्रा के दौरान रमा ने सभी चर्चाओं को ध्यान से सुना। पिताजी रमा के बड़े भाई को संध्या सिखाते थे। अतः रमा ने भी साथ-साथ में सभी मंत्र बोलना सीख लिया था। १८७६-७७ में दक्षिण में भारी अकाल पड़ा तब रमा के पिता ने अपनी सारी संपत्ति दान में दे दी। इससे भिक्षा माँगने की स्थिति उत्पन्न हुई। इसलिए सारे परिवार ने अब जंगल का रास्ता लिया। जंगल में रमा के पिताजी ने संन्यास ग्रहण किया। परिवार के शेष सदस्यों ने जलसमाधि लेने का विचार किया, परन्तु उस विचार को छोड़कर आगे बढ़ते गए। इसी दौरान प्रथम पिता का, फिर माता का और अन्त में दूसरी बहन का भी देहावसान हो गया। बाकी बचे- भाई और रमा। वे दोनों कश्मीर से बंगाल तक भ्रमण करते रहे और जैसे-तैसे अपना जीवन बचाया। वे तीर्थ क्षेत्रों में संन्यासियों से लेकर लूटमारों- सभी प्रकार के लोगों के सम्पर्क में आए। अन्त में कोलकाता पहुँचे, जहाँ वे पुनः मानव समाज में वापस आ बसे। केवल शरीर पर अपने वस्त्रों के साथ यहाँ आयी हुई इस बीस वर्ष की तेजस्वी तरुणी ने कोलकाता के एक मन्दिर में अपने संस्कृत भाषा के ज्ञान की प्रतीति कराई। भाई और बहन भुखमरी के कारण कृश हो गए थे। परन्तु ज्ञान और संस्कारिता का तेज उनके मुख पर दिखाई देता था। कोलकाता में ऐसी बात फैल गई थी कि यह महिला तो सरस्वती की अवतार जैसी है।

स्थान-स्थान पर सभाओं में उनको प्रवचन करने के आमंत्रण मिलने लगे। इसी दौरान इनके भाई का भी स्वर्गवास हो गया। अब रमा अकेली हो गई। बिपिनबिहारी दास नामक एक युवक ने उनसे लग्न ग्रन्थि से जुड़ने का प्रस्ताव रखा। परन्तु वह व्यक्ति हरिजन होने से लोगों में रमाबाई की निन्दा होने लगी। बचपन से धर्म पालन करती हुई यह महिला अब हिन्दू धर्म के प्रति सशंक होती जा रही थी। पुत्री मनोरमा के जन्म के पश्चात् पति भी कोलेरा में चल बसे। देशमुख एवं राणाडे जैसे अग्रणिओं ने रमाबाई को महाराष्ट्र में आकर काम करने का आग्रह किया। १८८२ में पुणे आकर रमाबाई ने महिला जागृति का कार्य प्रारम्भ किया। 'आर्य महिला समाज' नाम की संस्था खड़ी की। तत्पश्चात् रमाबाई ने लार्ड हंटर के समक्ष मराठी में वाद-विवाद किया। उनकी तार्किक बातों से प्रभावित होकर हंटर जब इंग्लैंड वापस गए तब इस वाद-विवाद का अंग्रेजी भाषान्तर रानी विक्टोरिया को पढ़कर सुनाया, जिससे रानी प्रसन्न हुईं। तत्पश्चात् माता और पुत्री मनोरमा इंग्लैंड चले गए। वहाँ उन्होंने ईसाई मत की दीक्षा ली। वहाँ कॉलेज में नौकरी करते हुए अंग्रेजी भाषा सीख ली। अब रमाबाई को अमेरिका से भी आमंत्रण मिलने लगे थे। रमाबाई को बहुत सम्मान मिला। अन्त में भारत वापिस आकर मुम्बई में विधवाओं की सहायता के लिए उन्होंने 'शारदा सदन' की स्थापना की। इस प्रकार रमाबाई लोगों के विरोध के बीच में भी आजीवन संगीन कार्य करती रहीं।'

– भावेश मेरजा

शोक संवेदना

न्यास के सहयोगी श्री नटवर जी की धर्मपत्नी श्रीमती सुमन के आकस्मिक निधन के अत्यन्त दुःखद समाचार से हम स्तब्ध हैं। सहसा विश्वास नहीं हो पा रहा। एक के बाद एक महासंकट व मर्मान्तक वियोगजन्य पीड़ा। कभी-कभी विधाता का विधान समझ नहीं आता। परन्तु सब कुछ समझ आ जाय तो हम अल्पज्ञ क्योंकर कहलायेंगे। शब्दों से हम क्या सान्त्वना दें। महज औपचारिकता प्रतीत होती है।

पर कहना ही होगा कि नटवर जी धैर्यपूर्वक दुःख के इस महासमुद्र को पार करें। दृढ़ आस्तिकता की भावना इसमें सहायक होगी। परमेश प्रभु से दिवंगत आत्मा की सद्गति और शान्ति हेतु प्रार्थना करते हैं।

– नारायण मित्तल, कोषाध्यक्ष-न्यास

पथ्य अपथ्य पर विचार

स्वास्थ्य

1. प्रथम चैत्र मास में गुड़ खाना हानिकारक होता है। इस महीने में खसरा–चेचक का भी प्रकोप होता है। इसलिए गुड़ खाना वर्जित है।
2. वैशाख का महीना जब आये तब कड़वा तैल खाना नहीं चाहिए। तब फोड़ा फुन्सी इत्यादि निकलते हैं। शरीर में खुजली होती है।
3. जेठ (ज्येष्ठ) का महीना जिसमें गर्मी अधिक होती है। हमें पेठा नहीं खाना चाहिए और अधिक धूप में भ्रमण करना भी हानिकारक है।
4. आषाढ़ का मास भी गर्मी लू तपन से ही व्यतीत होता है। इस महीने में बेल फल का प्रयोग करना वर्जित बताया गया है।
5. सावन के महीने में पत्ते वाले शाक नहीं खाने चाहिए वे अच्छे नहीं होते हैं। साथ ही सत्तू का प्रयोग भी करना बहुत हानिकारक है और सायंकाल का भोजन सूर्य छिपने से पूर्व करना हितकर होता है। रात्रि को भूलकर के भोजन नहीं करें। इस महीने में खीर का भोजन स्वादिष्ठ लाभप्रद होता है।

6. भादों (भाद्रप्रद) का महीना वर्षा ऋतु का है। घनघोर घटाएँ गगन में बिजली की चमक गर्जन होती है। इस महीने में मट्ठा (छाछ) और मूली का प्रयोग करना नहीं चाहिए।
7. क्वार (आश्विन) मास के दिनों में श्राद्ध न्यौरता (नवरात्रि) आती है। इस महीने में करेले खाना हितकारक है। कार्तिक के महीने में सर्दी शुरू हो जाती है।
8. इस महीने में दही खाना रोग बुलाना है। दिवाली का त्योहार आता है तब भूख बढ़ जाती है। जठराग्नि अपना कार्य करने में तेजी लाती है। इसमें तीन बार खाना भी हजम हो जाता है।
9. अगहन के महीने में दिन छोटे रात्रि बड़ी हो जाती है। इसमें जीरा का प्रयोग हानिकारक है और गर्म पदार्थ खाना गुणकारी है। बादाम, किसमिस, छुहारे, काजू, पिस्ता इत्यादि खाना चाहिए।
10. पूस के महीने में धनिया खाना वर्जित है और धूप में सेंक, तेल मालिश, तपना, गर्म वस्त्र धारण करना चाहिए।
11. माघ के महीने में मिश्री का प्रयोग न करें और स्वास्थ्यवर्द्धक औषधियों का प्रयोग करें। इस सर्दी के महीने में गाजर, बथुआ, आमला, हरे मटर, मैथी इत्यादि लाभप्रद है।
12. फाल्गुन में चना का प्रयोग कम करना चाहिए। वसन्त ऋतु आ जाती है। होली जलाने के बाद स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

बासी चावल (भात) नहीं खाने चाहिए और तीन दिवस की रखी छाछ (मट्ठा) प्रयोग में नहीं लाना चाहिए।

उपरोक्त महीनों में जो बात बताई गई है इनको ठीक प्रकार समझ कर विशेष ध्यान रखने वालों को भी रोग नहीं सताते हैं। जो अनुकूलता बरतते हैं वे सुखी रहते हैं और इसके प्रतिकूल व्यवहार करते हैं वे अनेकों रोगों से ग्रस्त रहते हैं। यह आयुर्वेद का कथन है यही स्वस्थ रहने का सार है।

1. अन्न पुराना अच्छा है। घी ताजा अच्छा है।
2. आसव, अरिष्ठ और भस्म जितनी पुरानी हों वे अच्छी हैं।
3. एल्यूमिनियम का बर्तन भोजन बनाने में प्रयोग न करें।
4. दन्त मंजन में अधिक नमक मिलाना हानिकारक है।
5. भांग, तम्बाकू, चाय, शराब, चरस, सुलफा, अफीम आदि का नशा करना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

लेखक- स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती 'आयुर्वेदाचार्य'
साभार- आरोग्य दर्पण

अविचल रहे तिरंगा प्यारा

प्यारे भारत राष्ट्र को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए जिन सहस्रों वीरों और वीरांगनाओं ने अपने प्राणों को आहूत करने में तनिक भी संकोच नहीं किया, कभी-कभी सोचता हूँ कि वो कौन सी अग्नि थी जिसने उन्हें सर्वोच्च बलिदान करने को प्रेरित किया? आज हम देखते हैं कि स्वभावतः हम सभी भौतिक सुख सुविधाओं के पीछे भागते रहते हैं। बातें हम भले ही राष्ट्र-प्रेम की कितनी ही करलें पर प्रेय-मार्ग में किंचित भी बाधा आने पर कछुए की भाँति सुरक्षित खोल में सर छुपाने में एक मिनट भी नहीं लगता फिर मृत्यु को वरण करना, यह तो सोच से भी परे है। जिस अवस्था में आज का किशोर जीवन को सुखमय बनाने के स्वप्न आँखों में लिए ताने-बाने बुनता है उस आयु में कैसे वो दीवाने राष्ट्र-हित पर कुर्बान हो गए। और राष्ट्र ने उन्हें वो सम्मान भी नहीं दिया जिसके वो हकदार थे। उनके हिस्से में गुमनामी ही आयी। परन्तु ध्यान रखें ये गुमनाम नायक ही स्वतंत्रता की लड़ाई के वास्तविक नायक थे। इन्हीं में से एक नाम कनक लता बरुआ का है, जिसने मात्र १७ वर्ष की उम्र में तिरंगे की शान के लिए सीने पर गोली खाने में कोई हिचक नहीं दिखायी। परन्तु आसाम के बाहर कम ही लोग इस वीर बाला के बारे में जानते हैं।

कनकलता का जन्म आसाम के दारांग जिले के बारंगबाडी गाँव में श्री कृष्णकांत बरुआ के यहाँ २२ दिसंबर १९२४ को हुआ। माता का नाम कर्णेश्वरी देवी था। कभी-कभी देखा गया है कि जिन्हें ईश्वर ने बड़ी जिम्मेदारी देनी होती है उनकी परीक्षा बचपन से ही प्रारम्भ हो जाती है। अभी कनक पाँच वर्ष की ही हुयी थी कि माता का देहान्त हो गया। पिता ने दूसरा विवाह किया। पर वे भी १३ वर्ष की कनकलता को छोड़ कर इस लोक से विदा हो गए। जिम्मेदारियों ने कनक को जल्दी बड़ा कर दिया। विमाता की भी मृत्यु हो जाने से छोटे भाई-बहिनों की जिम्मेदारी भी कनक पर आ पड़ी। ननसाल में आसरा मिला। पर इस सब का नतीजा यह हुआ कि कनक तीसरी कक्षा से अधिक नहीं पढ़ सकी। मामाओं, देवेन्द्र नाथ और यदुराम बोस का क्रान्तिकारी गतिविधियों की ओर रुझान था। इसी से कनक में देश प्रेम की प्रबल भावना ने जन्म लिया। अनेक क्रांतिकारी सभाओं में मामाओं के साथ कनक ने भाग लिया। प्यारे देश के लिए कुछ भी कर गुजरने के अरमान कनक के मन में मचलने लगे थे। मई १९३२ ई. में गमेरी गाँव में रैयत सभा आयोजित की गई, उस समय कनकलता केवल सात वर्ष की थी पर वह उत्साह पूर्वक सभा में गयी। असम के प्रसिद्ध कवि और नवजागरण के अग्रदूत ज्योति प्रसाद अगरवाल ने उस सभा की अध्यक्षता की थी। उनके देशप्रेम से ओतप्रोत गीतों ने कनक के बाल मन में राष्ट्रप्रेम का दीप प्रज्ज्वलित कर दिया था।

१९४२ में गाँधी जी ने 'करो या मरो' का नारा देते हुए 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का श्री गणेश किया। आसाम भी पीछे न था। परन्तु ब्रिटिश सरकार ने कांगेस के सभी बड़े नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। गोपीनाथ बरदलै, सिद्धनाथ शर्मा, मौलाना तैयबुल्ला, विष्णुराम मेधि आदि नेताओं को जेल में बंद कर दिया गया। इससे नीचे क्रम के नेताओं के ऊपर आन्दोलन को गति देने की जिम्मेदारी आ गयी। मोहिकांत दास, गहन चंद्र गोस्वामी, महेश्वर बरा तथा अन्य लोगों ने आन्दोलन की बागडोर संभाली। अन्त में ज्योति प्रसाद अगरवाला को नेतृत्व संभालना पड़ा। इसी बीच ब्रिटिश पुलिस ने

लोगों पर अत्याचार ढाने प्रारम्भ कर दिए। स्वतंत्रता सैनानियों से जेलें भर गयीं। दारंग जिले के राष्ट्रभक्तों ने 'मृत्यु वाहिनी' नाम से ऐसे वीरों की टोली तैयार की जो मृत्यु का आलिंगन करने को तैयार थी। कहा जाता है कि कनकलता ने आजाद हिन्द फौज में भरती का प्रयास किया पर किसी कारण से वे सफल नहीं हुयीं। पर इससे वे निराश नहीं हुयीं। कनकलता ने मृत्युवाहिनी की सदस्यता ग्रहण कर ली। इसके सदस्य रेलों की पटरियों को उखाड़ने, संचार व्यवस्था को ध्वस्त करने आदि कार्यों में संलग्न हो गए। इसी बीच पटरी उखाड़ने के कारण एक ट्रेन एक्सीडेंट हुआ जिसमें अनेक ब्रिटिश अफसरों की मृत्यु हो गयी। इस घटना में स्थानीय कांग्रेस समिति के अध्यक्ष कुशाल कोंवर को दोषी ठहराकर उन्हें फांसी दे दी गयी, जबकि उनका इससे कोई लेना देना नहीं था।

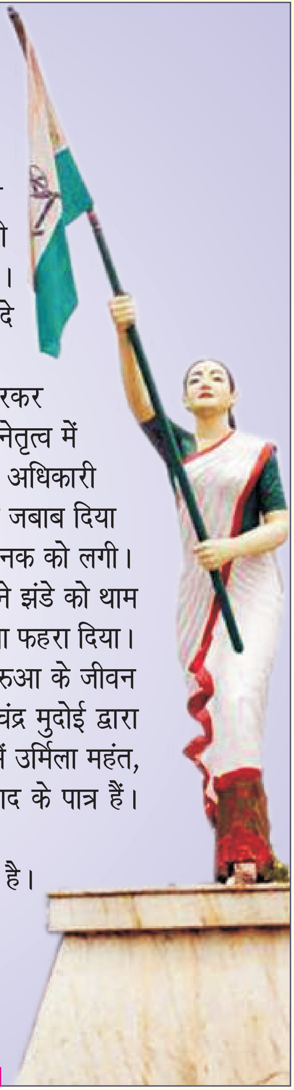

अब मृत्युवाहिनी के सदस्यों ने निश्चय किया के वे सरकारी कार्यालयों से अंग्रेजी ध्वज उतारकर तिरंगा लहरायेंगे। २० सितम्बर १९४२ को गहपुर थाने की ओर ज्योति प्रसाद अगरवाल के नेतृत्व में मृत्युवाहिनी के सदस्यों ने मार्च किया। सबसे आगे तिरंगा लिए १७ वर्षीय कनक थी। पुलिस अधिकारी पी.एम. सोम ने चेतावनी दी कि वापिस लौट जाओ अन्यथा गोली चला दी जायेगी। कनक ने जबाब दिया आप अपना काम करें हम हमारा करेंगे। बोगी कछारी नामक सिपाही ने गोली चलाई वह कनक को लगी। वह भूमि पर गिर गयी पर तिरंगा हाथ से न छोड़ा जब तक कि उसके साथी मुकुंद काकोती ने झंडे को थाम न लिया। और इसी प्रकार वीर गिरते रहे पर अंततोगत्वा रामपति राजखोवा ने थाने पर तिरंगा फहरा दिया।

निदेशक चंद्रमुदोई ने Epaah Phulil Epaah Xoril नाम से एक फिल्म कनकलता बरुआ के जीवन पर बनायी है जिसे हिन्दी में 'पूरब की आवाज' नाम से बनाया गया है। पूरब की आवाज चंद्र मुदोई द्वारा निर्देशित और लोकनाथ डेका द्वारा निर्मित एक भारतीय ऐतिहासिक ड्रामा फिल्म है। फिल्म में उर्मिला महंत, निपान गोस्वामी, देबाशीष बोर्थाकुर, रीना बोरा और अन्य शामिल हैं। ये फिल्मकार धन्यवाद के पात्र हैं। अधिक से अधिक लोगों को ये फिल्म देखनी चाहिए।

तेजपुर के कनकलता उद्यान में कनक की मूर्ति अदम्य साहस और राष्ट्रप्रेम का सन्देश देती है।

हमारा स्वातन्त्र्य भवन ऐसे ही सहस्रों वीर-वीरांगनाओं के बलिदान पर खड़ा है।

ऐसी वीरांगना को हम निम्न पंक्तियों के साथ श्रद्धांजलि देना चाहेंगे।

सारे सुख-वैभव जोट रहे थे राह तुम्हारी, पर स्वदेश पर मर मिटने की चाह तुम्हारी।
जालिम क्रूर कुचाली ने थी गोली मारी, पर फहराता रहा तिरंगा आन तुम्हारी।।

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹११,०००)

स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री भवानी दास आर्य, श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल, श्री रतिराम शर्मा, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री नारायण लाल मित्तल, श्री सुधाकर पीयूष, श्रीमती शारदा गुप्ता, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्रीमती आभा आर्या, गुप्त दान दिल्ली, आर्यसमाज गाँधीधाम, गुप्तदान उदयपुर, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, श्री मोती लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, श्री जयदेव आर्य, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती सरोज वर्मा, श्री विवेक बंसल, श्री दीपचंद आर्य, श्री एम.पी. सिंह, प्रो. आर.के.एरन, श्री खुशहालचन्द आर्य, श्री विजय तायलिया, श्री वीरेन्द्र मित्तल, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री भारतभूषण गुप्ता, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री विकास गुप्ता, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टाक, श्री नरेश कुमार राणा, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी. एकेडमी, टाण्डा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री रघुनाथ मित्तल, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री प्रह्लादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव श्री लोकेश चन्द्र टांक, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरमुखी, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए., श्री राजेन्द्र कुमार सक्सेना, कोटा, श्रीमती सुमन सूद, कन्डा घाट (सोलन), माता शीला सेठी, न्यूजर्सी, डॉ. एस. के. माहेश्वरी, उदयपुर, श्री राजेश तिवारी (शिक्षक), ग्वालियर, श्रीमती सविता सेठी, चण्डीगढ़, डॉ. पूर्णसिंह डबास, नई दिल्ली, श्री बृज वधवा, अम्बाला शहर, श्री हजारी लाल आर्य, उदयपुर, डॉ. सत्यप्रकाश, हरदोई, राजेन्द्रपाल वर्मा, वडोदरा, प्रिन्सीपल डी. ए. वी. एच. जेड. एल. सी. सै. स्कूल, दरीबा (राजसमन्द), आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, होशंगाबाद, श्री ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, नोएडा, श्री भरत ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, अहमदाबाद, श्री सुरेन्द्र कर्मचन्दानी, पुणे, डॉ. आनन्द कुमार शर्मा, नई दिल्ली, श्री रमेश चन्द्र गुप्ता, यू.एस.ए., श्री शुद्धबोध शर्मा; श्रीगंगानगर, श्री कन्हैया लाल आर्य, शाहपुरा, श्री अशोक कुमार वार्ष्णेय; बडोदरा, डॉ. सत्या पी. वार्ष्णेय; कनाडा, नागेन्द्र प्रसाद गुप्ता, बगहा (बिहार), श्री गणेशदत्त गोयल, बुलन्दशहर (उ. प्र.), श्री पूर्णचन्द आर्य, कानोड़, श्री वेदप्रकाश आर्य; नई दिल्ली, श्री सत्यनारायण शर्मा; उदयपुर, श्रीमती राधा देवी-रतनलाल राजोरा; निम्बाहेड़ा, श्री सत्यप्रकाश शर्मा; उदयपुर, श्री सुदर्शन कुमार कपूर; पंचकूला, श्री देवराज सिंह; उदयपुर, श्रीमती ललिता मेहरा; उदयपुर, श्री कृष्ण लाल डंग आर्य; हिमाचल प्रदेश, श्री जी. राजेश्वर आर्य; हैदराबाद

समाचार

महर्षि दयानन्द दर्शक दीर्घा हापुड़ की प्रथम वर्षगाँठ सम्पन्न

हापुड़, रविवार १८ अक्टूबर २०२०, आर्य समाज हापुड़ में गत वर्ष स्थापित 'महर्षि दयानन्द दर्शक दीर्घा' जिसका उद्घाटन माननीय राज्यपाल गंगाप्रसाद जी ने किया था की प्रथम वर्षगाँठ पर ऑनलाइन गूगल मीट पर समारोह का आयोजन किया गया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश ने कहा कि

नवलखा महल, उदयपुर के बाद इस प्रकार का प्रचार कार्य हापुड़ आर्य समाज ने किया है, जो कि अत्यन्त सराहनीय है इस चित्रदीर्घा से नए लोग प्रेरणा ग्रहण करेंगे। महर्षि दयानन्द के बताए रास्ते पर चलकर ही समाज का कल्याण हो सकता है। महर्षि दयानन्द युग द्रष्टा थे उन्होंने समाज में आमूल-चूल परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने एक नई सोच व वैचारिक क्रान्ति को जन्म दिया जिसे जन-जन तक पहुँचाने की आवश्यकता है। यह चित्रदीर्घा वर्तमान में वैदिक संस्कृति को बढ़ावा देने हेतु डिजिटल टेक्नोलॉजी है। नई रोचक तकनीक से युक्त है।

समारोह अध्यक्ष, केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष अनिल आर्य ने कहा कि आज समाज में बढ़ता पाखण्ड अंधविश्वास चिन्ता का विषय है। पढ़े-लिखे लोग भी इसमें फंस जाते हैं। बड़े-बड़े राजनेता हों या उद्योगपति, कहीं न कहीं इसके जाल में फंसे दिखाई देते हैं। प्रतिष्ठित व्यक्तियों को देखकर आम व्यक्ति भी बहक जाता है। ये दर्शकदीर्घा जीवन को सही मार्ग पर चलने में सहायता करेगी।

उदयपुर के सत्यार्थ प्रकाश न्यास के कार्यकारी अध्यक्ष अशोक आर्य ने कहा कि महर्षि दयानन्द जी ने उदयपुर के नवलखा महल में बैठकर सत्यार्थ प्रकाश की रचना की थी वहाँ निर्मित चित्रदीर्घा की प्रतिलिपि के रुप में आर्य समाज हापुड़ ने महर्षि दयानन्द चित्रदीर्घा का निर्माण कर सराहनीय कार्य किया है, इस पर उन्होंने प्रसन्नता जाहिर की और कहा यह आर्यावर्त्त की वैभवशाली संस्कृति का दर्शन कराने वाली दीर्घा है।

गायिका संगीता आर्या, पुष्पा चुघ व आचार्य धर्मेन्द्र शास्त्री ने ईश भक्ति के गीतों से समा बाँध दिया। कुशल संचालन करते हुए आर्य नेता आनन्द प्रकाश आर्य ने कहा कि उत्तर भारत में यह दर्शकदीर्घा आकर्षण का केन्द्र बनती जा रही है जो कि महर्षि दयानन्द जी के विचारों को आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगी।

इस अवसर पर प्रधान नरेन्द्र कुमार आर्य, मंत्री अनुपम आर्य, प्रान्तीय महामंत्री प्रवीण आर्य आदि उपस्थित थे।

आर्य समाज द्वारा काढ़ा वितरण

आर्य समाज कोटा, गायत्री परिवार ट्रस्ट कोटा तथा बत्रा परिवार की ओर से संक्रमण से बचाव हेतु आमजन को बजरंग नगर रोड़ पर औषधीय काढ़ा वितरण का कार्यक्रम आयोजित किया गया।

आर्य समाज के प्रान्तीय प्रचार प्रभारी अर्जुनदेव चड्ढा व गायत्री परिवार ट्रस्ट के मुख्य ट्रस्टी जीडी पटेल ने बताया कि काढ़ा बनाने में गिलोय, तुलसी, मुस्तक, चिरायता, पिपली, भुई आँवला, काली मिर्च, पित्त पापड़ा, अड़ूला, कटेली आदि औषधियाँ डालकर ४ घंटे तक इसे उबालकर तैयार किया गया।

उन्होंने बताया कि यह औषधीय काढ़ा पीने से शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। आज १२३० लोगों को काढ़ा पिलाया गया। कुछ लोग स्टील के बर्तनों में परिवार के लिए काढ़ा लेकर गये। काढ़ा वितरण में आर्य समाज के राधावल्लभ राठौड़, सामाजिक कार्यकर्ता अमित पिपलानी, सागर पिपलानी, उदित खत्री, सत्यजीत नागपाल कृतिक बत्रा व दीपक अरोड़ा का सराहनीय सहयोग रहा। काढ़ा बनाने की सामग्री गायत्री ट्रस्ट, कोटा द्वारा निशुल्क उपलब्ध कराई गई थी। - अर्जुनदेव चड्ढा

डॉ. महेन्द्र भानावत को वर्ष 2020-21 का लोक शिखर सम्मान

उदयपुर के लोकसंस्कृति अध्येता डॉ. महेन्द्र भानावत को वर्ष २०२०-२१ का लोक शिखर सम्मान प्रदान किया जाएगा। भोपाल की कला समय संस्था पिछले आठ वर्षों से कला-साहित्य की शख्सियतों को शिखर सम्मान प्रदान कर रही है।

कला समय के सचिव भंवरलाल श्रीवास के अनुसार इस वर्ष डॉ. महेन्द्र भानावत को लोकसाहित्य के प्रति उनकी दीर्घ साधना तथा समर्पित गहरे अवदान के लिए 'लोक शिखर सम्मान' प्रदान किया जाएगा।

शोक संवेदना

श्री उमाशंकर जी अग्रवाल के निधन के दुखद समाचार से हम सभी गहन दुःख की अनुभूति करते हैं। वे सौम्य, सरल, मृदुभाषी होने के साथ धार्मिक प्रवृत्ति के धनी थे। न्यास के सभी कार्यक्रमों में मान्या माताजी के साथ उनकी सहभागिता प्रायः सुनिश्चित होती थी। हमें व्यक्तिगत रूप से उनका स्नेह तथा वरद हस्त प्राप्त था। उनकी काव्य प्रतिभा तथा रचनाधर्मिता से भी लोग प्रभावित थे। जिस समाज से वे जुड़े, निःस्वार्थ सेवा के पर्याय बन गए। वे स्वयं एक बैंक अधिकारी पद से अवकाश प्राप्त थे पर न्यास को दिए अर्थदान से उनकी उदारता परिलक्षित होती है।

ऐसी मनस्वी प्रतिभा का महाप्रयाण निश्चित रूप से एक अभाव का सृजन कर गया है। यह कमी खलती रहेगी। पर विधाता के इस अटल विधान के समक्ष हम मनुष्यों के लिए सर झुकाने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं है। अतः हम सद्भावनावश प्रभु के चरणों में यही विनय करते हैं कि दिवंगत आत्मा को अपनी आनन्दमयी गोद में स्थान प्रदान करें और शोक संतप्त परिवार को, विशेष रूप से मान्या माताजी को धैर्य धारण करने की शक्ति प्रदान करें।

हम परिवारीजनों के प्रति अपनी ओर से और न्यास के सभी सदस्यों की ओर से शोक संवेदना प्रकट करते हैं। - भवानीदास आर्य, मंत्री-न्यास

हलचल

कौन कहता है कि मुफ्तखोर केवल भारत में होते हैं।

लंदन का एक जिला है सेंट गिल्स। वहाँ साल १८१४ में १७ अक्टूबर की इतिहास की बेहद ही अनोखी घटना घटित हुई। उस घटना को लंदन बियर फ्लड या लंदन बियर की बाढ़ के नाम से जाना गया।

बियर की उस बाढ़ में ९ लोगों की जान चली गई थी और बहुत सारे लोग घायल हो गए थे। इलाके के कई घरों और भवनों को काफी नुकसान पहुँचा। इन विशालकाय टैंकों को लोहे के ढक्कन से ढका गया था। हादसे वाले दिन लोहे के ये ढक्कन बरसों के दबाव और घिसने की वजह से टैंक से हट गए थे। इस घटना के करीब एक घंटे बाद पूरे टैंक में विस्फोट हो गया। इस वजह से गर्म-गर्म बियर फैक्ट्री से निकलकर बाहर बहने लगी। ऐल्कोहल की इस सुनामी की वजह से कई और टैंक फट गए। सभी टैंकों की करीब ३,२०,००० गैलन बियर शराब भट्टी की दीवार से इतनी ताकत से टकराई कि दीवार गिर गई।

बियर अपने रास्ते में आने वाली हर चीजों को बहाते हुए आसपास की गलियों में घुस गई। बियर की लहर करीब १५ फीट ऊँची थी। बियर के साथ मलबे दो घरों के बेसमेंट में घुस गए और ताश के पत्ते की ढ़ेर की तरह दोनों घर ढ़ेर हो गए। उनमें से एक घर में एक माँ और उसकी बच्ची दोपहर का भोजन कर रहे थे। घर गिरने से दोनों की मौत हो गई। दूसरे घर में एक शोक सभा चल रही थी। शोक मना रहे चारों लोग मकान के गिरने की वजह से मर गए।

बियर पास के एक पब को तोड़ते हुए उसके अन्दर घुस गई। वहाँ मौजूद एक किशोर बियर की बाढ़ के बीच फंस गया और उसकी मौत हो गई। एक अन्य आदमी जो पब जा रहा था, वह भी बीच में फंस गया और दीवार गिरने से उसकी भी मौत हो गई। लेकिन शराब भट्टी के तीन श्रमिक चमत्कारिक रूप से बच गए। स्थानीय लोगों को यह मुफ्त बियर पीने का अच्छा मौका लगा। सैकड़ों लोग गलियों में निकल पड़े। कोई अपने हाथ में कप तो कोई कटोरा तो कोई बाल्टी ही लेकर निकल पड़ा। जरूरत से ज्यादा शराब पीने के कारण एक व्यक्ति ऐल्कोहल पाइजनिंग का शिकार हो गया और कुछ दिनों बाद उसकी भी मौत हो गई।

हॉर्स शू शराब भट्टी के मालिकों के खिलाफ अदालत में मुकदमा कर दिया गया। लेकिन जज ने घटना को दैवी घटना माना और कम्पनी मालिकों को सभी आरोपों से मुक्त कर दिया। उसके बाद से ही लकड़ी के फर्मेंटेशन टैंक का इस्तेमाल धीरे-धीरे बन्द हो गया और उसकी जगह पर कंक्रीट के मजबूत टैंक बनाए जाने लगे। -साभार- नवभारत टाईम्स

प्रतिस्वर

मान्यवर भ्राता जी, नमस्ते

सत्यार्थ सौरभ का यह अंक पाठकों के लिये काफी महत्वपूर्ण है। खोजपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यों का समावेश हमारे ज्ञान को काफी सशक्त बनाने का माध्यम बन जाता है। पत्रिका को पढ़ने से ज्ञात होता है कि सम्पादक महोदय, आर्य समाज के छिपे हुए इतिहास को सुन्दर एवं सरल भाषा में सजाकर जिस प्रकार प्रस्तुत करते हैं, हमें ऐसा लगता है कि इनका यह पुरुषार्थ पाठकों के लिए वरदान सिद्ध होगा।

सत्यार्थ सौरभ जन-जन पढ़े।

पढ़कर नूतन इतिहास गढ़े।।

– संजय सत्यार्थी, बिहार

आदरणीय संपादक जी, सादर नमस्ते

सत्यार्थ सौरभ अक्टूबर माह का अंक पीडीएफ फाइल में वाट्सएप पर प्राप्त हुआ। अंक प्रेषण के लिए हार्दिक धन्यवाद।

पत्रिका अति उत्तम है। पत्रिका के प्रारम्भिक काल में कुछ वर्षों तक मैं ग्राहक रहा व्यस्तता के कारण रिन्यू नहीं करा पाया हाँ जहाँ भी मुझे इसके पुराने अंक मिलते हैं वहाँ से लेकर मैं आज भी इसे पढ़ता हूँ। सम्पूर्ण पत्रिका में आपकी लगन और पुरुषार्थ स्पष्ट दिखाई देता है। उच्च कोटि के लेखों का चयन आपकी विद्वता का परिचायक है। आत्म निवेदन के रूप में आपका संपादकीय महत्वपूर्ण और विचारणीय रहता है। सत्यार्थ पीयूष में सत्यार्थ प्रकाश के विचारों को अत्यन्त सरल और प्रभावी शब्दों में पाठकों के समक्ष रखना आपकी योग्यता का परिचायक है। आपकी लगन एवं पुरुषार्थ के कारण ही इतने कम समय में सत्यार्थ सौरभ पत्रिका की गिनती आर्य जगत् की शीर्ष पत्रिकाओं में हो रही है।

आर्य सिद्धान्तों को जन-जन तक पहुँचाने के नए-नए तरीके चाहे वो सत्यार्थ प्रकाश की परीक्षा हो, पहेली हो, साहित्य प्रकाशन हो चाहे ग्रामीण क्षेत्रों में वेद प्रचार के कार्यक्रम हों। सभी कार्य मुझे बहुत प्रभावित करते हैं। आप एवं आप सदृश दयानन्द के सिपाहियों के अनुकरण स्वरूप ही आगरा नगर में कुछ प्रचार कार्य संचालित किये हैं। परमेश्वर आपको समाज कल्याणार्थ शक्ति प्रदान करें और आप हमारा मार्गप्रशस्त सदैव करते रहें। यही कामना है।

– विश्वेन्द्रार्यः

पुरोहित -आर्य समाज कमला नगर आगरा

शोक संवेदना

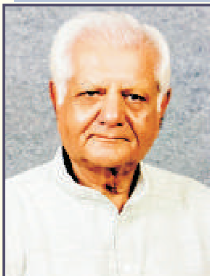

हमारे आदरणीय भाई, अनन्य स्नेही, सिद्धान्त मर्मज्ञ, सम्मोहक वक्ता, राजस्थान में आर्यसमाजों व अनेक संस्थाओं को अपने कुशल नेतृत्व से विस्तार प्रदान करने वाले, वर्षों से अनेक गम्भीर बीमारियों को चुनौती देते रहने वाले सत्यव्रत सामवेदी जी के महाप्रयाण पर सजल नेत्रों से श्रद्धांजलि देते हुए प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि वे दिवंगत आत्मा को अपनी आनंदमयी गोद में स्थान प्रदान करें।

– अशोक आर्य, नवलखा महल, उदयपुर

सत्यार्थ-पीयूष

ईश्वर भक्ति क्यों?

अब हमारे कुछ बन्धु यह प्रश्न कर सकते हैं कि जब ईश्वर न तो हमें क्षमा करता है न ही अपनी भक्ति से प्रसन्न होकर 'विशेष अनुग्रह' करता है तब उसकी भक्ति क्यों की जाय? विस्तृत विषय को संक्षेप रूप में निम्न प्रकार प्रस्तुत करते हैं-

(अ) जीव की समस्त गतिविधियों का एक ही लक्ष्य होता है अधिकतम सुख प्राप्त करना। यही कारण है कि जब उसे यह ज्ञान हो जाता है कि किसी क्रिया विशेष को करने से दुःख की प्राप्ति होती है तब वह उससे विरत हो जाता है।

सभी प्रकार के सांसारिक सुख, अपूर्ण, क्षणिक हैं। यही कारण है जीव उनसे तृप्त नहीं होता, अधिकाधिक की चाह उसकी बनी रहती है। कारण स्पष्ट है कि संसार में परम सुख-परमानन्द है ही नहीं। जो वस्तु जिसके पास है, उसी से मिल सकती है और आनन्द का भंडार परम पिता परमात्मा ही है अतः केवल उसी की उपासना से परम सुख प्राप्त हो सकता है।

एतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति। - छान्दोग्य उपनिषद् (प्र.६/ख.८/मं७)

वह परमात्मा जानने योग्य है। जो यह अत्यन्त सूक्ष्म और इस सब जगत् और जीव का आत्मा है, वही, सत्य स्वरूप और अपना आत्मा आप ही हैं।

(ब) ईश्वर भक्ति से हम उसकी अनन्त कृपाओं के बदले तनिक सी कृतज्ञता प्रकट कर सकते हैं। कृतज्ञता मनुष्य का भूषण है जबकि कृतघ्नता सबसे बड़ा दूषण है। लोक में कोई हम पर तनिक भी उपकार करता है हम बार बार उसका धन्यवाद करते हैं। चिकित्सक फीस लेकर हमें स्वस्थ करता है फिर भी हम उसे बार बार धन्यवाद देते हैं। फिर जो ईश्वर बिना माँगे, निःशुल्क हमें शरीर ही नहीं मन, बुद्धि और स्वयं आत्मा की उन्नति हेतु समस्त साधन प्रदान करता है क्या उसके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मनुष्य का धर्म नहीं है?अवश्य है। इसीलिए महर्षि दयानन्द जी महाराज सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखते हैं-

'और जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना नहीं करता, वह कृतघ्न और महामूर्ख होता है, क्योंकि जिस परमात्मा ने इस जगत् के सब पदार्थ जीवों को सुख के लिये दे रखे हैं उसका गुण भूल जाना, ईश्वर ही को न मानना कृतघ्नता और मूर्खता है।' उत्तम गुण कर्म स्वभाव वाले व्यक्तियों की चर्चा मन में पवित्रता का भाव पैदा कर, उनके प्रति श्रद्धा जागृत कर, प्रीति उत्पन्न कर उनके जैसा बनने की प्रेरणा देती है। महापुरुषों के सुपावन चरित्रों के पठन, कथन, श्रवण का यही महान् उद्देश्य होता है।

ईश्वर भक्ति का लाभ-

अहं राजा वरुणो मह्यं तान्यसुर्याणि प्रथमा धारयन्त।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजामि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः।।

- ऋग्वेद ४/४२/२

जो मनुष्य सर्वत्र व्यापक, बुद्धि तथा धन के दाता और संसार के स्वामी मुझ परमात्मा की भक्ति करते हैं, वे सब सुखों का सेवन करते हैं।

फिर ईश्वर जैसी पूर्णकाम सत्ता के गुण कर्म स्वभाव के चिन्तन मनन का ऐसा परिणाम क्यों न होगा? हाँ यह अवश्य है कि हृदय से उसके महान् गुण कर्म स्वभावों को अंगीकार करें। ऐसा होने पर उससे इतनी प्रीति बढ़ेगी कि अन्य बातें जो हमें पतन के रास्ते पर धकेलती हैं उनके लिए अवकाश ही नहीं रहेगा।

कविवर रहीम ने साधक की ऐसी ही स्थिति के बारे में कितना सटीक लिखा है-

प्रीतम-छवि नयनन बसी, पर-छवि कहाँ समय।
भरी सराय रहीम लखि, आप पथिक फिरि जाय।।

अर्थात् जब आपके मन में केवल और केवल प्रभु के गुणों का चिंतन होगा, सांसारिक कार्य करते हुए भी मन की यही स्थिति होगी तो विषय वासनाऐं स्वयं अपने लिए स्थान न देख दूर चली जावेंगी।

- अशोक आर्य
नवलखा महल, गुलाब बाग

डॉ. भूपेन्द्र शर्मा और अवनीश मैत्रिः सम्मानित

कोरोना काल के जटिल समय में समाज जागृति के लिए प्रदत्त रचनात्मक, सामाजिक, सांस्कृतिक योगदान हेतु अध्यात्म पथ (पंजी) मासिक पत्रिका द्वारा डॉ. भूपेन्द्र शर्मा, मंत्री-आर्य समाज, हिरणमगरी, उदयपुर एवं श्री अवनीश मैत्रिः, सह संयोजक, वैदिक संस्कृति प्रचार संघ को **विशिष्ट मानव रत्न सम्मान** से सम्मानित किया गया है। न्यास एवं सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से अनेकशः बधाई।

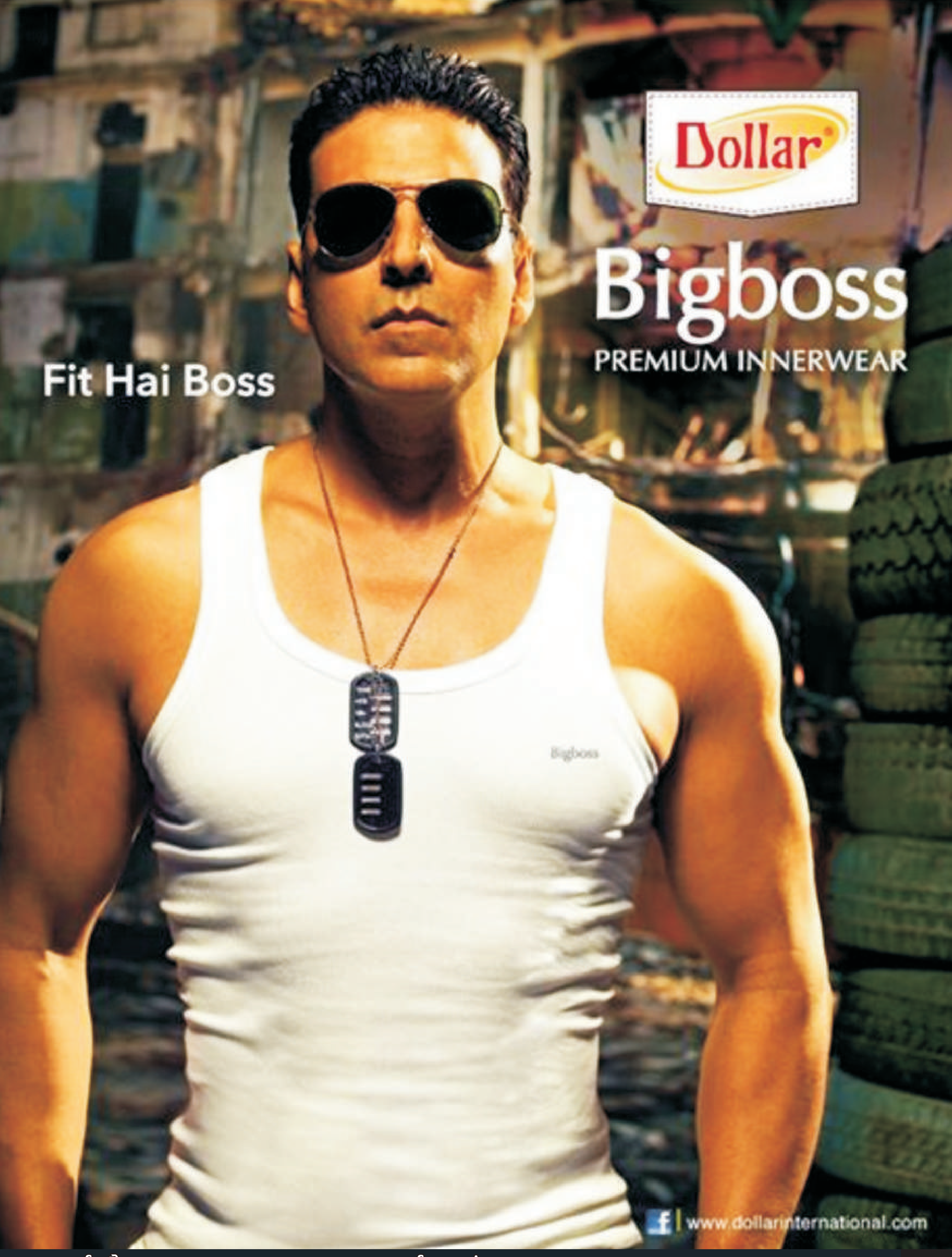
Dollar
Bigboss
PREMIUM INNERWEAR
Fit Hai Boss
Bigboss
www.dollarinternational.com

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 November-2020 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2019-2021

इसलिये सम्पूर्ण वेद मनुस्मृति तथा ऋषिप्रणीत शास्त्र, सत्पुरुषों का आचार और जिस-जिस कर्म में अपना आत्मा प्रसन्न रहे अर्थात् भय-शंका-लज्जा जिस में न हो, उन कर्मों का सेवन करना उचित है। देखो! जब कोई मिथ्याभाषण, चोरी आदि की इच्छा करता है, तभी उस के आत्मा में भय, शंका, लज्जा अवश्य उत्पन्न होती है, इसलिये वह कर्म करने योग्य नहीं।

- सत्यार्थ प्रकाश, दशम समुल्लास पृष्ठ २५७

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित
प्रेषण कार्यालय- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य
मुद्रण दिनांक- प्रत्येक माह की ३ तारीख | प्रेषण दिनांक- प्रत्येक माह की ७ तारीख | प्रेषण कार्यालय- मुख्य डाकघर, चेतक सर्कल, उदयपुर